धरनीदास जी की बानी

[जीवन-चरित्र सहित]

प्रकाशक
बेलवेडियर प्रिंटिंग वर्क्स
इलाहाबाद

[तीसरी बार

Printed at the Belvedere Printing Works, Allahabad, By Sheel Mohan

[illegible] में छप

ने लिखा है—

तोल सस्ता है ॥"

माला के जो दोष

से वह दूसरे

धरनीदासजी की बानी

[जीवन-चरित्र सहित]

जिसमें

उन महात्मा के चुने हुए शब्द और राग, गर्भ-लीला कवित्त, ककहरा, अलिफ़-नामा, पहाड़ा, बारहमासा, बोध-लीला और साखियाँ मय गूढ़ शब्दों के अर्थ और संकेत नोट में दिये हैं।

प्रकाशक

बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स

इलाहाबाद

सन् १९७६ ई०

[मूल्य]

Printed at The Belvedere Printing Works, Allahabad, By Sheel Mohan

धरनीदासजी का जीवन-चरित्र

बाबा धरनीदास जी जाति के श्रीवास्तव्य कायस्थ एक बड़े महात्मा थे। इनका न्म जिला छपरा (सूबा बिहार) के माँझी नामी गाँव में संवत् १७१३ विक्रमी ं हुआ पर चोला छोड़ने का समय ठीक मालूम नहीं होता। माँझी का गाँव सरजू नदी के ट पर उत्तर की ओर बसा है जहाँ अब एक बड़ा पुल रेल का बन गया है।

धरनीदास जी के पिता का नाम परसरामदास था और घर में खेती का काम ोता था। धरनीदास जी आप माँझी के बाबू के दीवान थे और उनके मालिक उनकी ड़ी कदर करते थे और पूरा भरोसा रखते थे पर उनकी अंतर गति से बेख़बर थे।

कहते हैं कि एक दिन धरनीदास जी ज़मींदारी के काम में लगे हुये थे कि चानक पानी भरा हुआ लोटा जो पास रक्खा हुआ था उन्होंने काग़ज़ और बस्ते पर लका दिया जिस पर पूछा गया कि ऐसा क्यों किया। धरनीदास जी ने कुछ जवाब दिया; आखिर को बाबू की अप्रसन्नता और उन्हें पागल समझ लेने पर उन्होंने कहा क जगन्नाथजी के वस्त्र में आरती करते समय आग लग गई थी जिसे मैंने पानी डाल र बुझाया है। इस कथन का विश्वास बाबू और उनके अधिकारियों को न हुआ और नकी हँसी उड़ाई जिस पर धरनीदास जी बस्ता छोड़ कर यह कहते हुए चल दिये—

"लिखनी नाँहि करों रे भाई। मोहिं राम नाम सुधि आई" ॥

राजा ने दो भरोसे के आदमी जगन्नाथपुरी को भेज कर तहकीक़ात की तो ालूम हुआ कि सचमुच जिस समय कि बाबा धरनीदास ने लोटे का पानी गिराया वहाँ ाग लगी थी जिसे उनकी सूरत का एक आदमी प्रगट होकर बुझा गया। इस हाल ी सुन कर बाबू बड़े लज्जित हुए और आप बाबा धरनीदास को बुलाने और उनसे अपना पराध छिमा कराने को गये पर उन्होंने फिर नौकरी पर लौटने से इनकार किया और हा कि अब हम को भगवत्भजन करने दो। बाबू ने बहुत कुछ नक़द और ज़मीन ी उनके गुज़ारे के लिये देना चाहा पर उन्होंने नामंज़ूर किया।

यही कथा जगन्नाथपुरी में आग बुझाने की कबीर साहब की बाबत भी प्रसिद्ध और कहाँ तक एतबार के लायक़ है इसे हम पढ़ने वालों की राय पर छोड़ते हैं।

इसके बाद बाबा धरनीदास गृहस्थ आश्रम छोड़ कर साधू हो गये और उसी ाँव में एक झोपड़ी डाल कर रहने लगे। कहते हैं कि उन्होंने गृहस्थ आश्रम में चन्द्रदास ाम के एक साधू से दीक्षा ली थी और भेष लेने पर एक दूसरे साधू सेवानन्द को गुरु ारन किया। जो हो इसमें सन्देह नहीं कि धरनीदास जी आप ऊँचे दरजे के शब्द-भ्यासी और गहिरे भक्त थे जिनकी गति उनकी अत्यंत मधुर, प्रेम रस में पगी हुई, ौर अंतरी भेद की बानी से प्रगट होती है।

कितनी ही करामातें बाबा धरनीदास जी की महिमा की मशहूर हैं मसलन एक बार नको कई अहीर जाति के चोर रात को मिले और उनसे अपनी राग में गीत गवाई र वहाँ से चल कर चोरी को गये और चोरी करने के पीछे आँखों पर ऐसी अँधेरी

छा गई कि रास्ता घर से निकलने का न सूझता था; जब उनको बहुत दुखी देखा तो धरनीदास जी ने अपने बड़े चेले सदानन्द जी को दया करके भेजा जो उनको अपने गुरू की सेवा में लाये। उनके सन्मुख पहुँचते ही चोरों की आँख खुल गईं और वह महात्मा जी के चरनों पर गिर कर सच्चे साधू बन गये।

इसी तरह कहते हैं कि एक बार बहुत से भेष रामत करते हुए आये जिनके भोजन का प्रबन्ध किया गया पर जब खाने का समय आया तो उन लोगों ने शरारत से कहा कि तुम कायस्थ हो और द्वारिकाधीश का छाप लगाकर अपनी शुद्धि नहीं की है इससे हम तुम्हारा धान्य ठाकुर जी को कैसे भोग लगा सकते हैं। धरनीदास ने हज़ार समझाया पर उन लोगों ने एक न सुनी आखि़र को महात्मा जी बोले कि अच्छा थोड़ी सी मुहलत दो तो हम द्वारिका जाकर छाप ले आते हैं यह कह कर वह अपनी कुटिया में घुस गये और तुर्तही बाहर निकल कर द्वारिका जी की छाप अपनी बाँह पर दिखला दी जिस को देखकर वह लोग अचरज में आ गये और चरनों पर गिरे।

ऐसे ही धरनीदास जी के शरीर त्याग करने की कथा प्रसिद्ध है कि जब समय आया ता अपने चेलों से कहा कि अब हम बिदा होते हैं यह कहकर उस स्थान पर आये जहाँ गंगा और सरजू का संगम है और जल पर चादर बिछा कर उस पर आसन जमा कर बैठ गये। थोड़ी देर तक धारा के साथ बहते नज़र आये फिर उनके चेलों को दीख पड़ा कि पानी में आग लगी जिसकी लवर आकाश तक उठी और धरनीदास जी गुप्त हो गये।

इन कथाओं पर टीका करना ऐसे भोले भक्तों का जो उन पर सचौटी से विश्वास करते हैं जी दुखाना होगा, तौ भी इतना कहना अनुचित न होगा कि बाबा धरनीदास सरीखे महात्मा की महिमा ऐसी सिद्धि शक्ति की कथाओं की मुहताज नहीं है और न सच्चे महात्मा कभी ऐसी करामात दिखलाते हैं।

बाबा धरनीदास जी की गद्दी पर उनके गुरुमुख चेले सदानन्द जी बैठे। अब तक वह गद्दी क़ायम है और हिन्दुस्तान भर में हज़ारों अनुयायी उनके पंथ के फैले हुये हैं, यद्यपि शब्द-अभ्यास बिरले ही करते हैं। धरनीदास जी के लिखे हुए दो ग्रंथों का पता चलता है—एक 'सत्यप्रकाश' और दूसरा 'प्रेम प्रकाश।

इस पुस्तक के पद और साखी इत्यादि कुछ तो हम को बाबू सरजूप्रसाद जी मुआफ़ीदार तेरही ज़िला बाँदा ने दिये जिन की सहायता संतबानी पुस्तक-माला के काम में कई बरस से चली आती है और कुछ बाबू धीरजोदास जी, सेक्रिटरी संतमत सुसैटी, जोतरामराय ज़िला पुरनिया के भेजे हुए वरक़ों से चुने गये हैं, जिन दोनों महाशयों को हम धन्यवाद देते हैं।

दास
एडिटर।

इलाहाबाद,
जून, सन १८११ ई०

धरनीदास जी की बानी

फुटकर शब्द

(१)

एक पिया मोरे मन मान्यो, पति ब्रत ठानो हो ।
अवरो जो इन्द्र समान, तौ तृन करि जानों हो ॥ १ ॥
जहँ प्रभु बैसि सिंहासन, आसन डासब हो ।
तहवाँ बेनियाँ डोलइबों, बड़ सुख पइबों हो ॥ २ ॥
जहँ प्रभु करहिं लवासन[१], पवढ़हिं आसन हो ।
कर तें पग सुहरैबों, हृदय सुख पइबों हो ॥ ३ ॥
धरनी प्रभु चरनामृत, नितहिं अचइबों हो ।
सन्मुख रहिबों मैं ठाढ़ी, अंतै नहिं जइबों हो ॥ ४ ॥

(२)

बहुत दिनन पिय बसल बिदेसा ।
आजु सुनल निज श्रवन सँदेसा ॥ १ ॥
चित चितसरिया[२] मैं लिहलों लिखाई ।
हृदय कमल धइलों दियना लेसाई ॥ २ ॥
प्रेम पलँग तहँ धइलों बिछाई ।
नख सिख सहज सिंगार बनाई ॥ ३ ॥
मन हित अगुमन दिहल चलाई ।
नयन धइल दोउ दुअरा बैसाई[३] ॥ ४ ॥
धरनी धनि[४] पल पल अकुलाई ।
बिनु पिया जिवन अकारथ जाई ॥ ५ ॥

(१) भोजन । (२) चित्रशाला । (३) बिठलाय दिया । (४) सोहागिन स्त्री ।

(३)

पिया मोर बसैं गउर गढ़[१], मैं बसों प्राग[१] हो।
सहजहिं लागु सनेह, उपजु अनुराग हो ॥ १ ॥
असन बसन तन भूषन, भवन न भावै हो।
पल पल समुझि सुरति, मन गहबरि[२] आवै हो ॥ २ ॥
पथिक न मिलहि सजन जन, जिनहिं जनावों हो।
बिहबल बिकल बिलखि चित, चहुँ दिसि धावों हो ॥ ३ ॥
होय अस मोहिं ले जाय, कि ताहि ले आवै हो।
तेकरि होइबो लउँड़िया, जे रहिया बतावै हो ॥ ४ ॥
तबहिं त्रिया पत[३] जाय, दोसर जब चाहै हो।
एक पुरुष समरथ, धन बहुत न चाहै हो ॥ ५ ॥
धरनी गति नहिं आनि, करहु जस जानहु हो।
मिलहु प्रगट पट[४] खोलि, भरम जनि मानहु हो ॥ ६ ॥

(४)

जहिया भइल गुरू उपदेस। अंग अंग कै मिटल कलेस ॥ १ ॥
सुनत सजग[५] भयो जीव। जनु अगिनी परै घीव ॥ २ ॥
उर उपजल प्रभु प्रेम। छुटि गे तब व्रत नेम ॥ ३ ॥
जब घर भइल अँजोर[६]। तब मन मानल मोर ॥ ४ ॥
देखे से कहल न जाय। कहले न जग पतियाय ॥ ५ ॥
धरनी धनि तिन भाग। जेहिं उपजल अनुराग ॥ ६ ॥

(५)

जग में कायथ जाति हमारी।
पायो है माला तिलक दुसाला, परमारथ ओहदा री ॥ १ ॥
कागद जहँ लगि करम कमायो, कैंची ज्ञान रसा[७] री।
गुरु के चरन अनंद जाप करि, अनुभव वरक[८] उतारी ॥ २ ॥

---

(१) नाम नगर का (अर्थ सपेद शहर)। (२) पछताना, घबराना। (३) हुर्मत। (४) घूँघट। (५) जाग उठना। (६) उँजेरा। (७) तीव्र। (८) पन्ना।

मन मसिहानी[1] साँच की स्याही, सुरति सोफ[2] भरि डारी ।
भरम काटि करि कलम छुरी छवि, तकि तृस्ना खत[3] मारी ॥ ३ ॥
तबलक[4] तत्त दया को दफदर, संत कचहरी भारी ।
रैयत जगत सब्द कै कोंड़ी, दूजी मार न मारी[5] ॥ ४ ॥
नाम रतन को भरो खजाना, धरो सो हृदय कोठारी ।
है कोइ परखनहार बिबेकी, बारम्बार पुकारी ॥ ५ ॥
धरनी साल ब साल अमाली[6] जमाखरच यहि पारी ।
प्रभु अपने कर[7] कागज मेरो, लीजै समुझि सुधारी ॥ ६ ॥

(६)

मन तुम यहि बिधि करो कैथाई ।
सुख संपति कबहूँ नहिं छीजै, दिन दिन बढ़त बड़ाई ॥ १ ॥
कसबा[8] काया करु ओहदा री, चित चिट्ठा धरु साधी ।
मोहासिब[9] करि अस्थिर मनुवाँ, मूल मंत्र अवराधी ॥ २ ॥
तत्त को तेरिज[10] बेरिज[11] बुधि की, ध्यान निरखि ठहराई ।
हृदय हिसाब समुझि के कीजे, दहियक देहु लगाई ॥ ३ ॥
राम को नाम रटो रोजनामा[12], मुक्ति सों फरद बनाई ।
अजपा जाप अवरिजा[13] करि के, सबै कर्म बिलगाई ॥ ४ ॥
रैयत पाँच पचीस बुझाए, हरि हाकिम रहे राजी ।
धरनी जमाखरच बिधि मिलि है, को करि सकै गमाजी[14] ॥ ५ ॥

(७)

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन बौरे, ऐसा खसम खुदाय कहाई रे ।
दाह[15] भयो दस मास को सुनु रे मन बौरे, तरसिर ऊपर पाँई रे ।

---

(१) दावात । (२) खुज्जा । (३) क़त जोकि क़लम में चीरा जाता है । (४) मुट्ठा कागजो का । (५) क़ायदा है कि कचहरी (अदालत) में जो कुसूरवार समझा जाता है उस को सजा या मार दो जाता है परंतु संतों को कचहरी में जगत की रैयत (जीवों) को शब्द रूपा कोड़ा (कोड़ा) का मार के सिवाय दूसरो मार नहीं दी जाती । (६) जाँच करने वाला अमला । (७) हाथ । (८) गाँव । (९) हिसाब करने वाला या न्याव करने वाला हाकिम । (१०) खुलासा जमाबंदी या हिसाब का । (११) मीज़ान या जोड़ती का काग़ज़ । (१२) रोज़नामचा । (१३) हिसाब का चिठ्ठा । (१४) ग़बन, चोरी । (१५) गर्भ की जलन।

आँच लगी जब आग की सुनु रे मन बौरे, आजिज ह्वै अकुलाई रे ।
कवल कियो मुख आपने सुनु रे मन बौरे, नाहक अंक लिखाई रे ।२।
अब की करिहौं बदगी सुनु रे मन बौरे, जो पइहो मुकलाई[1] रे ।
जग आये जंगल परे सुनु रे मन बौरे, भरम रहे अरुझाई रे ॥३॥
पर की पीर न जानिया सुनु रे मन बौरे, नाहक छुरी चलाई रे ।
बाँधि जँजीरे जाइ हो सुनु रे मन बौरे, बहुरि ऐसहीं जाई रे ॥४॥
सतगुरु के उपदेस ले सुनु रे मन बौरे, दोजख दरद मिटाई रे ।
मानुष देह दुरलभ है सुनु रे मन बौरे, धरनी कह समुझाई रे ॥५॥

(८)

भाई रे जीभ कहल नहिं जाई ।
नाम रटन को करत निठुराई, कूदि चलै कुचराई[2] ॥ १ ॥
चरन न चलै सुपंथ पै पग दुइ, अपथ चलै अतुराई[3] ।
देत बार कर दीन्ह दूबरो, लेत करै हथियाई[4] ॥ २ ॥
नैना रूप सरूप सनेही, नाद स्रवन लुबधाई[5] ।
नासा चहती बास बिषै की, इन्द्री नारि पराई ॥ ३ ॥
संत चरन को सीस नवै नहिं, ऊपर अधिक तराई ।
जो मन घेरि बेन्हिये[6] बाँधो, भाजे छाँद[7] तुराई ॥ ४ ॥
का सों कहों कहे को मान, अंग अंग अकुठाई[8] ।
धरनीदास आस तब पूजे, जो हरि होहिं सहाई ॥ ५ ॥

(९)

मन बसि लेहु अगम अटारी ॥ टेक ॥
नव नारिन को द्वारा निरखो, सहज सुखमना नारी ॥ १ ॥
अजब अवाज नगारा बाजत, गगन गरजि धुनि भारी ॥ २ ॥

---

(१) मुकलना = भेजना; गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ़ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अब की कष्ट से छुड़ा दो तो अब बंदगी भक्ति करूँगा । (२) बैल के अड़ने को कूचर कहते हैं । (३) जलदी । (४) देने की बेर अपने हाथ को कमजोर कर लेता याने खींचे रहता है और लेने की बेर हाथ फैला देता है । (५) ख़ाहिशमंद । (६) पकड़ना । (७) रस्सी । (८) अकुलाता है ।

तहँ बरे बाती दिवस न राती, अलख पुरुस मठ धारी ॥ ३ ॥
धरनी के मन कहा न मानै, तबहिं हनो है कटारी । ४ ॥

(१०)

मन रे तू हरि भजु अवरि कुमति तजु,
है रहु बिमल बिरागी अनुरागी लो ॥१॥
देई देवा सेवा झूठी, जैसे मरकट मूठी,
अंत बहुरि बिलगाने पछिताने लो ॥२॥
जठर अगिन जरै, भोजन भसम करै,
तहँ प्रभु पालल देंही, नित तेही लो ॥३॥
सुत हित बंधु नारी, इन सँग दिना चारी,
जल सँग परत पखाने[1], असमाने लो ॥४॥
पर जन हाथी घोरा, इहव कहत मोरा,
चित्र लिखल पट[2] देखा, तस लेखा लो ॥५॥
धरनी भिच्छुक बानी, हम प्रभु अज्ञा मानी,
मिलहु पट[3] खोली, अनमोली लो ॥६॥

(११)

मन तुम कस न करहु रजपूती ॥ १ ॥
गगन नगारा बाजु गहागह, काहे रहो तुम सूती ॥ २ ॥
पाँच पचीस तीन दल ठाढ़े, इन सँग सेन[4] बहूती ॥ ३ ॥
अब तोहि घेरी मारन चाहत, जस पिंजरा महँ तूती ॥ ४ ॥
पइहो राज समाज अमर पद, है रहु बिमल बिभूती ॥ ५ ॥
धरनीदास बिचार कहतु है, दूसर नाहिं सपूती ॥ ६ ॥

आरती व भोग

(१)

भक्त बछल[5] जब भोग लगावै । पंचामृत षट रस रुचि भावै ॥१॥
आदि कुमारी चउका सारै । चरन पखारि के बेद बिचारै ॥२॥

---

(१) ओला। (२) पटरी। (३) किवाड़। (४) फौज। (५) भक्त वत्सल।

ब्रह्मा बिस्नु महेसुर देवा। कर जोरे ठाढ़े करि सेवा ॥३॥
आरति सेत अनंत बिराजै। सहजहिं सब्द अनाहद गाजै ॥४॥
धरनी प्रभु देवन को देवा। मानि लेत सब जन की सेवा ॥५॥

(२)

मन बच क्रम मोरे राम कि सेवा। सकल लोक देवन को देवा ॥१॥
बिनु जल जल भरि भरि नहवावों। बिना धूप के धूप धुपावों ॥२॥
बिन घंटा घरी घंट बजावों। बिनहिं चँवर सिर चँवर ढुरावों ॥३॥
बिन आरति तहँ आरति वारों। धरनी तहँ तन मन धन वारों ॥४॥

॥ चितावनी गर्भ लीला ॥

॥ रेखता ॥

जै जै उचारो, "धरनी" ध्यान धारो।
तजो मन बिकारो, भजो प्रान प्यारो ॥ १ ॥
जबै गर्भ बासा, कियो मानुखासा।
बनो माथ हाथा, चरन पीठ साथा ॥ २ ॥
लगो पेट ग्रीवा[1], अहुट हाथ सीवा।
रकत मास हड्डी, तुचा रोम चड्ढी ॥ ३ ॥
कियो दसव द्वारा, पवन प्रान धारा।
तहाँ प्रान प्यारा, दियो आय चारा ॥ ४ ॥
बँधे अष्ट गाता, अधो मुख झुलाता।
भयो कष्ट भारी, तो कहता पुकारी ॥ ५ ॥
नरक तें निकारो, हौं बंदा तिहारो।
करौं भक्ति ऐसी, कहौं आज जैसी ॥ ६ ॥
चरन चित्त लावों, न काहू दुखावों।
दया करि दयाला, उहाँ तें निकाला ॥ ७ ॥
कछुक दिन अचेते, गये दूध लेते।
बहुरि अन्न पानी, बचा बोल जानी ॥ ८ ॥

(१) गर्दन।

कही काहु माता, पिता बहिन भाई।
लगो काहु चाचा, चचानी सगाई ॥ ९ ॥
ममेरा फुफेरा खलेरा[1] घनेरा।
अरोसी परोसी चिन्हो चेर चेरा ॥१०॥
कुला कर्म जानो थगानो बिगानो।
उहाँ गुष्ट[2] कीन्हो सो भरमो भुलानो ॥११॥
गई बालवस्था भयो देंह कामा।
बहू ब्याह लाये बजाये दमामा ॥१२॥
घोड़े बटोरे बराती बनाये।
बड़े डिंभ[3] करि कै बहू ब्याह लाये ॥१३॥
त[4] दुनिया के परिपंच देखौ जु आये।
अपहिं आपने पाँव बेरी बँधाये ॥१४॥
खनी खंदकै कोट कीन्ही कँगूरा।
महल के टहल में घनेरे मजूरा ॥१५॥
माया को पसारा कियो फौज भारी।
बड़ी साहबी चाँप कीन्हो सवारी ॥१६॥
कबहुँ जाय पच्छिन सों पंछी धरावै।
कबहुँ जंगली जीव कुत्तन तुरावै ॥१७॥
कबहुँ जाल जंजाल मच्छी बझावै।
कबहुँ बन घेरावै अगिन से जरावै ॥१८॥
सो तोपैं गढ़ावै गढ़ो को ढहावै।
कबहुँ बंद बेसी मवेसी ले आवै ॥१९॥
बड़े चाक चौखूट ईंटा पकावै।
जड़े पाथरे नक्सगीरी करावै ॥२०॥
धरा धोरहर धवल ऊँचो उठावै।
तहाँ जोरि आछे बिछौना बिछावै ॥२१॥

(१) मवसियाउत नाता। (२) जो गर्भ में प्रतिज्ञा की थी। (३) धूमधाम, खटराग। (४) तो।

तहाँ फूल फैलो लगे तूल तकिया।
दरीची बरीची उठै झाँक झँकिया ॥२२॥
सिपाही घनेरे खड़े सीस नावैं।
किते भिच्छुको झूँठ सोभा सुनावैं ॥२३॥
हरिन माल[1] मेढ़ा व हस्ती लड़ावै।
नई नागरी नारि[2] नाटिन नचावै ॥२४॥
घरी को बजावै समुझि जिय न आवै।
हरैं धन बिराना धसोरा[3] लगावै ॥२५॥
कतेको भले जीव सूली चढ़ावै।
महा मस्त ह्वै मुंड-माला बँधावै ॥२६॥
जो हरि की भगति जीव-दाया दिढ़ावै।
करै ता की निंदा नगोचा न आवै ॥२७॥
बिलोका पसारा मनहिं मन बिचारा।
जगत जेर मारा जिवन धर हमारा ॥२८॥
त करता कला देखि ऐसो बिचारा।
लगे दूत गैबी पलंगै पछारा ॥२९॥
किते बैद बैठे करैं औषधाई।
कितेको करैं आप संसा ओझाई[4] ॥३०॥
किते जंत्र तावीज लीखैं लिखावैं।
कितेको सगुनिया झरावैं फुकावैं ॥३१॥
कहैं आज ऐसो मिलै जो जियावै।
बराबर कया[5] भार सोना सो पावै ॥३२॥
जबहिं जुक्ति जगदीस ऐसी बनाई।
तबहुँ राम को नाम निहचै न आई ॥३३॥

(१) पहलवान। (२) पतुरिया। (३) धाँधली। (४) ओझा जो जंत्र मंत्र करते हैं। (५) काया, देह।

तकावै तबेला झुमेला[1] के हाथी।
परो बूझि यह दाँव संगी न साथी ॥३४॥
खजाना रुपइया सोनइया[2] जहाँ हीं।
रहो सुंदरी जो जहाँ सो तहाँ हीं ॥३५॥
कमाई समुझि जीव आई रोआई।
गये ऐसहीं जन्म भक्ती न आई ॥३६॥
चलावन[3] चहै जाहि जगदीस रइया।
कहो ताहि को जग कवन है रखइया ॥३७॥
दैव को न जाना दिया सो बुझाना।
जगीरी तगीरी व थाना निसाना ॥३८॥
पयानो पयानो[4] पुकारें जु लोगा।
त रोवै कबीला परो मुंड सोगा ॥३९॥
जना चारि आये वहाँ तें उठाये।
अगिन में जराये नदी में बहाये ॥४०॥
पिन्हाये कफन खोदि खादे गड़ाये।
जु दीवान साहब सलामत को आये ॥४१॥
प्रबोधो न पाँचो बहुत नाच नाचो।
कला खेलि खाली चले इन्द्रजाली[5] ॥४२॥
जहाँ धर्मराया चितरगुप्त छाया।
उहाँ पत्र देखा सुकृत की न रेखा ॥४३॥
नहीं नाम गाया नहीं जीव दाया।
भगति की न भेवा नहीं साधु सेवा ॥४४॥
जुआ जन्म हारे बे गुरु के बिचारे।
भुलाने अनारी परो बीचि भारी ॥४५॥

(१) झूमने वाला। (२) सोना। (३) बुलाना। (४) निकालो निकालो। (५) काम क्रोध आदिक पाँचो दूत को रोका नहीं बल्कि इन्हीं का नाच नाचते थे सो मरने पर ऐसा ही हुआ जैसे कि इन्द्रजालवाला तमाशा करके चल देता है।

गये यहि प्रकारा कितेको भुवारा[१] ।
अवर जो बेचारा करे को सुमारा ॥४६॥
गये कौरवो और सिसुपाल रावन ।
गये छप्पनो कोटि जादव कहावन ॥४७॥
गये चक्कवे चक्रवर्ती कहाये ।
गये मडली कोउ सँदेसो न पाये ॥४८॥
गये साकबधी सका बाँधि केते ।
ते माटी मिले बीर बलवान जेते[२] ॥४९॥
गये खानखानाँ सुलताँ छत्रधारी ।
गये मीर उमरा करोरों हजारी ॥५०॥
जो बेगम बेचारी गमे[३] मार डारी ।
हुती प्रान-प्यारी सो नारी पवारी ॥५१॥
गये रावना और रानी गुमानी ।
तिन्हों की कहो धौं कहाँ है निसानी ॥५२॥
गये लखपती जो धजा बाँधि कोटी ।
दियो डारि पाँसा लई मारि गोटी ॥५३॥
हिये चेति चेतो चितौनी चिताओं ।
सँभारो सँभारो अगाओं अगाओं[४] ॥५४॥
भरे दाग पीछे जतन कर धुवइये ।
अगाऊँ नहीं दाग के बाट जइये ॥५५॥
कृपा तें भई मानुषा देंह यारो ।
चलो राह नेकी बदी को बिसारो ॥५६॥
भगति भाव चूके सोई भवन फूँके ।
जिन्हों भक्ति भेंटा जरा मरन मेटा ॥५७॥

(१) भुवाल = राजा । (२) ऐसे राजा जिनका शाक चलता है और शूर वीर धूल में मिल गये । (३) शोक । (४) आगे ही से ।

सोई जन सुभागे उलटि पंथ लागे।
हिये दाग दागे पिया प्रेम पागे ॥५८॥
भगति ध्रुव कमाया अचल राज पाया।
भले आपु जागे अवर को जगाया ॥५९॥
त प्रहलाद अहलाद[1] बहु भक्ति धारी।
तपै इन्द्र[2] कैसो सकै कौन टारी ॥६०॥
मोरधुज[3] तम्रधुज[3] जनक[3] अम्मरीखा[3]।
जुधिष्ठिर[3] भरथ[3] गोपिचंदे परीछा[3] ॥६१॥
बिभीषन को देखो कि जो भक्ति साजे।
अजहुँ लोक निकलंक निरसंक गाजे ॥६२॥
भगति भरथरी की अवर जानि पीपा।
जिन्हों का अमर नाम है दीप दीपा ॥६३॥
कबीरा[3] गोरखनाथ[3] मीरा[3] बड़ाई।
कामा[3] व नामा[3] सुदामा[3] भलाई ॥६४॥
सुकदेव[3] जयदेव[3] सोभा सुहाई।
रैदास[3] सेना[3] धना[3] धीरताई ॥६५॥
अमर नाम अहमद[3] तजी पादसाही।
दुनी[4] में प्रगट प्रेम जा को सराही ॥६६॥
फकीरी करै कोउ साँचे अकीदा।
मिसाले रहीमा[3] बजीदा[3] फरीदा[3] ॥६७॥
नीके जानि के चत्रभुज[3] चित्त लाया।
भजी लोक लज्जा तजी मोह माया ॥६८॥
बिराजे जहाँ लौं भगत लोक माहीं।
कहाँ लौं कहौं संत को अंत नाहीं ॥६९॥

---

(१) उमंग से। (२) उन को इंद्र कितना ही दुख दे पर भक्ति से नहीं टाल सकता। (३) भक्तों के नाम। (४) दुनियाँ।

सकल संत दाया चितवनी चिताया।
धरनिदास आया सरन राम राया ॥७०॥

॥ शब्द ॥
(राग सारंग)
॥ १ ॥

भइ कंत दरस बिनु बावरी।
मो तन ब्यापै पीर प्रीतम की, मूरुख जानै आवरी ॥१॥
पसरि गयो तरु प्रेम साखा सखि, बिसरि गयो चित चाव री।
भोजन भवन सिंगार न भावै, कुल करतूति अभाव री ॥२॥
खिन खिन उठि उठि पंथ निहारों, बार बार पछिताँव री।
नैनन अंजन नींद न लागै, लागै दिवस बिभाव[1] री ॥३॥
देंह दसा कछु कहत न आवै, जस जल ओछे नाव री।
धरनी धनी अजहुँ पिय पाओं, तौ सहजै अनँद बधाव री ॥४॥

॥ २ ॥

हरि जन हरि के हाथ बिकाने।
भावै कहो जग धृग जीवन है, भावै कहो बौराने ॥ १ ॥
जाति गँवाय अजाति कहाये, साधु सँगति ठहराने।
मेटो दुख दारिद्र परानो,[2] जूठन खाय अघाने ॥ २ ॥
पाँच जने परबल परपंचो, उलटि परे बंदिखाने।
छुटी मजूरी भये हजूरी, साहब के मन माने ॥ ३ ॥
निरममता निरबैर सभन तें, निरसंका निरबाने।
धरनी काम राम अपने तें, चरन कमल लपटाने ॥ ४ ॥

॥ ३ ॥

हरि जन वा मद के मतवारे।
जो मद बिना काठि बिनु भाठी, बिनु अग्निहिं उदगारे ॥ १ ॥
वास अकास घराघर भीतर, बुंद झरै झलका रे।
चमकत चंद अनंद बढ़ो जिव, सब्द सघन निरुवारे ॥ २ ॥

(१) बुरा। (२) भागा।

बिनु कर धरे बिना मुख चाखे, बिनहिं पियाले ढारे।
ताखन[1] स्यार सिंह को पौरुष, जुत्थ गजंद बिडारे ॥ ३ ॥
कोटि उपाय करै जो कोई, अमल न होत उतारे।
धरनी जो अलमस्त दिवाने, सोइ सिरताज हमारे ॥ ४ ॥

॥ ४ ॥

हित करि हरि नामहिं लाग रे।
घरी घरी घरियाल पुकारै, का सोवै उठि जाग रे ॥ १ ॥
चोआ चंदन चुपड़ तेलना, और अलबेली पाग रे।
सो तन जरे खड़े जग देखो, गूद निकारत काग रे ॥ २ ॥
मात पिता परिवार सुता सुत, बंधु त्रिया रस त्याग रे।
साधु के संगति सुमिर सुचित होइ, जो सिर मोटे भाग रे ॥ ३ ॥
सम्बत जरै बरै नहिं जब लगि, तब लगि खेलहु फाग रे।
धरनीदास तासु बलिहारी, जहँ उपजै अनुराग रे ॥ ४ ॥

॥ ५ ॥

ऐसे राम भजन करु बावरे।
बेद साखि जन कहत पुकारे, जो तेरे चित चाव रे ॥ १ ॥
काया द्वार है निरखु निरंतर, तहाँ ध्यान ठहराव रे।
तिरबेनी एक संगहिं संगम, सुन्न सिखर कहँ धाव रे ॥ २ ॥
हद्द उलंघि अनाहद निरखो, अरध उरध मधि ठाँव रे।
राम नाम निसु दिन लव लागै, तबहिं परम पद पाव रे ॥ ३ ॥
तहँ है गगन गुफा गढ़ गाढ़ो, जहाँ न पवन पछाँव रे।
धरनीदास तासु पद बंदै, जो यह जुगति लखाव रे ॥ ४ ॥

॥ ६ ॥

मेरे राम भलो ब्योपार हो।
वा सों दूजा दृष्टि न आवै, जाहि करो रोजगार हो ॥ १ ॥

---

(१) तत्छन=चटपट।

जो खेती तौ उहै कियारी, बिनु बीज बैल हर फार हो।
रात दिवस उद्दम करे, गंग जमुन के पार हो ॥ २ ॥
बनिज करो तौ उहै परोहन,[१] भरो बिबिधि परकार हो।
लाभ अनेक मिले सतसंगति, सहजहिं भरत भँडार हो ॥ ३ ॥
जो जाचौ[२] तौ वाहि को जाचौ, फिरो न दूजे द्वार हो।
धरनीं मन बच क्रम मन मानो, केवल अधर अधार हो ॥ ४ ॥

(राग गंधार)

॥ १ ॥

जुग जुग संतन की बलिहारी।
जो प्रभु अलख अमूरत अविगत, तासु भजन निरबारी ॥ १ ॥
मन बच क्रम जगजीवन को ब्रत, जीवन को उपकारी।
संतन साँच कही सबहिन तें, सुत पितु भूप भिखारी ॥ २ ॥
ढोलिया ढोल नगर जो मारै, गृह गृह कहत पुकारी।
गोधन जुत्था पार करिबे को, पीटत पीठि पहारी[३] ॥ ३ ॥
एहि जग हरि भगता पतिबरता, अवर बसै बिभिचारी।
धरनी धृग जीवन है तिन्ह को, जिन्ह हरि नाम बिसारी ॥ ४ ॥

॥ २ ॥

जो जन भक्त बछल उपवासी[४]।
ता को भवन भयो उँजियारो, प्रगटी ज्ञोति दिवा सी ॥ १ ॥
लोक लाज कुल कानि बिसारी, सार सब्द को गासी।
तिन्ह को सुजस दसो दिसि बाढ़ो, कवन सकै करि हाँसी ॥ २ ॥
हरि ब्रत सकल भक्त जन गहि गहि, जम तें रहे मवासी[५]।
देह धरी परमारथ कारन, अंत अभैपुर बासी ॥ ३ ॥
काम क्रोध तृस्ना मद मिथ्या, सहज भये बनबासी[६]।
संतत[७] दीन दयाल दयानिधि, धरनीजन सुखरासी ॥ ४ ॥

---

(१) गाड़ी। (२) माँगो। (३) गौओं के झुंड को इधर उधर बिचर जाने से बचाने को पीठ पर लाठी मारते हैं। (४) सेवक। (५) रक्षा में, बचे हुए। (६) निकसुआ, खारिज। (७) निरन्तर।

(राग बेलावल)

(१)

मोहिं कछु नाहिं बिसाय, कोउ कैसहु कहि जाव री ॥ टेक ॥
झाँकि झरोखे रावला, मन मोहन रूप देखाव री।
दृष्टि परे परबस पर्यो घर, घरहु न मोहिं सोहाय री ॥ १ ॥
जस जलचर जल में चरै, मुख चारो सहज समाय री।
निगलत तो वहि निर्भय, अब उगलत उगलि न जाय री ॥ २ ॥
जस पंछी बन बैठियो, अपनो तन मन ठहराय री।
नर[1] को भेद न भेदियो, पर अवचक लागे आय री ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

जाहि परो दुख आपनो, सो जानै पर पीर।
धरनी कहत सुन्यो नहीं, बाँझ की छाती छीर ॥

(२)

तब कैसे करिहौ राम भजन।
अबहिं करौ जब कछु करि जानौ, अवचक कींच[2] मिलैगो तन ॥१॥
अंत समौ कस सीस उठैहौ, बोल न ऐहै दसन रसन[3]।
थकितनाड़िका[4] नैन स्रवन बल, बिकलसकल अंग नखसिखसन[5] ।२।
ओझा बैद सगुनिया पंडित, डोलत आँगन द्वार भवन।
मातु पिता परिवार बिलखि[6] मन, तोरि लिये तन सब अभरन ॥३॥
बार बार गुनि गुनि पछतैहौ, परबस परिहै तन मन धन।
धरनी कहत सुनो नर प्रानी, बेगि भजो हरि चरन सरन ॥४॥

(३)

एक अलाह के मैं कुरबानी। दिल ओझल[7] मेरा दिलजानी ॥१॥
तू मेरा साहब मैं तेरा बन्दा। तू मेरि सभी हवस पहिचन्दा ॥२॥
बार बार तुम कहँ सिर नावौं। जानि जरूर तुम्हैं गोहरावौं ॥३॥
तुमहिं हमारे मक्का मदीना। तुमहीं रोजा रिजिक रोजीना ॥४॥
तुमहिं कोरान खतम खतमाना। तुम तसबी अरु दीन इमाना ॥५॥

(१) नरकुल जिसमें लासा लगा कर चिड़िया फँसाते हैं। (२) मिट्टी। (३) दाँत और जबान। (४) नाड़ी। (५) सिर से पैर तक। (६) रो कर। (७) ओट में।

मैं आसिक महबूब तू दरसा । बेगर[१] तोहि जहान जहर सा ॥६॥
देहु दिदार दिलासा एही । नातर जाव बिनसि बरु देंही ॥७॥
कादिर तुमहिं कदर को जाना । मैं हिन्दू किधों मूसलमाना ॥८॥
धरनीदास खड़े दरवाजा । सब के तुमहिं गरीब निवाजा ॥९॥

(४)

मैं निरगुनियाँ गुन नहिं जाना । एक धनी के हाथ बिकाना ॥१॥
सोइ प्रभु पक्का मैं अति कच्चा । मैं झूठा मेरा साहब सच्चा ॥२॥
मैं ओछा मेरा साहब पूरा । मैं कायर मेरा साहब सूरा ॥३॥
मैं मूरख मेरा प्रभु ज्ञाता । मैं किरपिन मेरा साहब दाता ॥४॥
धरनी मन मानो इक ठाउँ । सो प्रभु जीवो मैं मरिजाउँ ॥५॥

(५)

दूरि न भाई खसम खुदाई । है हाजिर पहिचानि न जाई ॥१॥
ढूँढ़ो अपना एही वजूदा[२] । बैठा मालिक महल मजूदा[३] ॥२॥
जा को साहब देत वफीक[४] । चारि पियाला करु तहकीक ॥३॥
महरम कोइ मिले जो यार । पल में पहुँचावै दरबार ॥४॥
धरनी बखत-बलंदी[५] सोइ । जाकी नजरि तमासा होइ ॥५॥

(६)

मेरे प्रभु तुमहिं अवर नहिं कोइ ।
बहु बिधि कहत सुनत नर लोइ ॥१॥
तुव बिस्वास दास मन मान ।
जुग जुग भगत-बछल जा की बान ॥२॥
अवरन्ह तें मेरो होत अकाज ।
छोड़ि कुल कानि बिसरि जग लाज ॥३॥
धरनी जनम हारि भावे जीति ।
अब मन बच क्रम हृदै प्रतीति ॥४॥

(१) बगैर, बिना । (२) शरीर । (३) मौजूद । (४) तौफीक । (५) भगवान ।

(७)
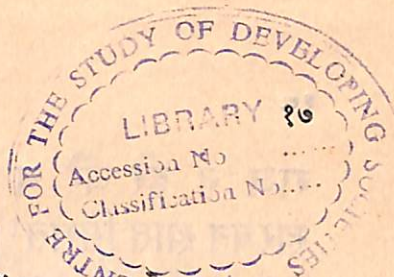
जब लग परम तत्तु नहिं जाने।
तब लग भरम भूत नहिं भाजे, करम कींच लपटाने ॥ १ ॥
सहस नाम कहि कहा भयो मन, कोटि कहत न अघाने।
भूले भरम भागवत पढ़ि के, पूजत फिरत पखाने ॥ २ ॥
का गिरि कंदर[1] मन्दर माहें, कंद मूरि खनि खाने।
कहा जो बरष हजार रह्यो तन, अंत बहुरि पछिताने ॥ ३ ॥
दानि कबीसुर सरसुती, रंक होउ भा राने।
प्रेम प्रतीति अमिय परचे बिनु, मिले न पद निरबाने ॥ ४ ॥
मन बच करम सदा निसिबासर, दूजो ज्ञान न ध्याने।
धरनी जन सतगुरु सिर ऊपर, भक्त-बछल भगवाने ॥ ५ ॥

(८)

मन भज ले पुरुष पुराना। जातें बहुरि न आवन जाना ॥
सब सृष्टि सकल जा को ध्यावै। गुरु-गम बिरला जन पावै ॥
निसि बासर जिन्ह मन लाया। तिन्ह प्रगट परम पद पाया ॥
नहिं मातु पिता परिवारा। नहिं बंधु सुता सुत दारा ॥
वै तो घट घट रहत समाना। धनि सोई जो ता कहँ जाना ॥
चारो जुग संतन भाखी। सो तो बेद कितेबा साखी ॥
प्रगटे जाके पूरन भागा। सो तो ह्वैगो सोन सोहागा ॥
उन्ह निकट निरंतर बासा। तहँ जगमग जोति प्रकासा ॥
धरनी जन दासन दासा। करु बिस्वंभर बिस्वासा ॥

(९)

एक धनी धन मोरा हो ॥ टेक ॥
काहू के धन सोना रूपा, काहू के हाथी घोरा हो।
काहू के मनि मानिक मोती, एक धनी धन मोरा हो ॥ १ ॥

(१) पहाड़ की गुफा।

राज न हरै जरै न अगिन तें, कैसहु पाय न चोरा हो ।
खरचत खात सिरात[१] कबहिं नहिं, घाट बाट नहिं छोरा हो ॥२॥
नहिं सँदूक नहिं भुइँ खनि गाड़ो, नहिं पट घालि मरोरा हो[२] ।
नैन के ओझल[३] पलकन राखों, साँझ दिवस निसि भोरा हो ॥३॥
जब धन लै मनि बेचन चाहे, तीनि हाट[४] टकटोरा हो ।
कोई बस्तु नाहिं ओहि जोगे, जो मोलऊँ सो थोरा हो ॥४॥
जा धन तें जन भये धनी बहु, हिंदू तुरुक करोरा हो ।
सो धन धरनी सहजहिं पायो, केवल सतगुरु के निहोरा हो ॥५॥

(राग टोड़ी)

जब मेरो यार मिलै दिल जानी । होइ लवलीन करौं मेहमानी ॥
हृदय कमल बिच आसन सारी । लै सरधा जल चरन खटारी[५] ॥
हित के चंदन चरचि चढ़ायो । प्रीति कै पंखा पवन डोलायो ॥
भाव के भोजन परसि जेंवायो । जो उबरा सो जूठन पायो ॥
धरनी इत उत फिरहि न भोरे[६] । सन्मुख रहहि दोऊ कर जोरे ॥

(राग नट)

(१)

करता राम करै सोइ होय ।
कल बल छल बुधि ज्ञान सयानप, कोटि करै जो कोय ॥ १ ॥
देई देवा सेवा करिके, भरम भुले नर लोय ।
आवत जात मरत औ जनमत, करम काँट अरुझोय ॥ २ ॥
काहे भवन तजि भेष बनायो, ममता मैल न धोय ।
मन मवास चपरि[७] नहिं तोड़ेउ, आस फाँस नहि छोय ॥ ३ ॥
सतगुरु चरन सरन सच पायो, अपनी देंह बिलोय ।
धरनी धरनि फिरत जेहि कारन, घरहिं मिले प्रभु सोय ॥ ४ ॥

---

(१) चुकना। (२) न कपड़े में धर कर गाँठ दी। (३) ओट। (४) तीन लोक। (५) धोया। (६) भूल से। (७) डबरा, तलैया।

(२)

प्रभुजी अब जनि मोहिं बिसारो।

असरन-सरन अधम-जन-तारन, जुग जुग बिरद तिहारो॥ १॥

जहँ जहँ जनम करम बसि पायो, तहँ अरुझे रस खारो।

पाँचहुँ के परपंच भुलानो, धरेउ न ध्यान अधारो॥ २॥

अंध गर्भ दस मास निरंतर, नखसिख सुरति सँवारो।

मंजा[1] मुत्र अग्नि मल कृम जहँ, सहजै तहँ प्रतिपारो॥ ३॥

दीजै दरस दयाल दया करि, गुन ऐगुन न बिचारो।

धरनी भजि[2] आयो सरनागति, तजि लज्जा कुल गारो[3]॥ ४॥

(३)

अजहुँ मन सब्द प्रतीति न आई॥ १॥

चंचल चपल चहूँ दिसि डोलै, तजत नाहिं चतुराई।

सब्द त सुक्र मुनि सारद नारद, गोरख की गरुआई॥ २॥

सब्द प्रतीत कबीर नामदेव, जागत जक्त दोहाई।

सदन धना रैदास चतुरभुज, नानक मीराबाई॥ ३॥

संत अनंत प्रतीति सब्द की, प्रगट परम गति पाई।

धरनी जो जन सब्द-सनेही, मोहिं बरनी नहिं जाई॥ ४॥

(४)

जौ लों मन तत्तहिं नहिं पकरै।

तौ लों कुमति किवार न टूटै, दया नाहिं उघरै॥ १॥

काहे के तीरथ बरत भटकि भ्रम, थाकि थाकि थहरै।

मंडप महजिद मुरति सुरति करि, धोखेहिं ध्यान धरै॥ २॥

काहेके अनत जिवन फल तोरै, का पचि अनल बरै।

काहेके बल करि जल पर सोवै, भुइँ खनि खँदक परै॥ ३॥

दान बिधान पुरान सुनै नित, तौ नहिं काज सरै।

धरनी भवजल तत्तु नाव री, चढ़ि चढ़ि भक्त तरै॥ ४॥

(१) मज्जा = हड्डी का गूदा या सड़ा पंछा। (२) भाग कर। (३) गाली।

(राग गौरी)

(१)

सुमिरो हरि नामहिं बौरे ॥टेक॥

चक्रहुँ चाहि चलै चित चंचल, मूल मता गहि निस्चल कौ रे ।
पाँचहुँ तें परिचै करु प्रानी, काहेके परत पचीस के झौरे[1] ॥१॥
जौं लगि निरगुन पंथ न सूझै, काज कहा महि-मंडल दौरे ॥२॥
सब्द अनाहद लखि नहिं आवै, चारो पन चलि ऐसहिं गौरे ॥३॥
ज्यों तेली को बैल बेचारा, घरहिं में कोस पचासक भौरे ॥४॥
दया धरम नहिं साधु की सेवा, काहेके सो जनमे घर चौरे ॥५॥
धरनीदास तासु बलिहारी, झूठ तजो जिन्ह साँचहिं धौ[2] रे ॥६॥

(२)

रे बन्दे तू काहे के होत दिवाना ।
एक अलाह दोस्त है तेरा, अवर तमाम बेगाना ॥ १ ॥
कौल करार बिसारि बावरो, मान गनी मन माना ।
आखिर नहिं दुनियाँ में रहना, बहुरि उहाँईं जाना ॥ २ ॥
जाहिर जीव जहान जहाँ लगि, सब मों एक खोदाई ।
बहुरि गनीम[3] कहाँ तें आया, जा पर छुरी चलाई ॥ ३ ॥
दूर नहीं है दिल का मालिक, बिना दरद नहिं पैहो ।
धरनी बाँग बुलंद पुकारे, फिरि पाछे पछितैहो ॥ ४ ॥

(३)

अब हरि दासि भई, तातें गहि चरन चित लाय ॥ टेक ॥
रही लजाय लोक की लज्जा, बिसरि गई कुल कानी ।
उपजी प्रीति रीति अति बाढ़ी, बिनुहीं मोल बिकानी ॥ १ ॥
छाजन भोजन की नहिं संसय, सहजहि सहज कमाये ।
संग सहेलरि छोड़ि कै अब, नेकु नाहिं बिलगाये ॥ २ ॥
दुखदाई दरसै नहीं हो, दहु दिसि सकल दयाल ।
अपनो प्रभु अपने गृह पायो, छटकि परो जंजाल ॥ ३ ॥

---

(१) झमेला । (२) गहा । (३) शत्रु ।

अब काहू के द्वार न आवो, नहिं काहू के जाव।
धरनी तहँ सच पाइयो, अब जहाँ धनी को नाँव ॥ ४ ॥

(राग कल्यान)

जा के गुरु चरनन चित लागा।
ता के मन की भरम भुलानी, धंधा धोखा भागा ॥ १ ॥
सो जन सोवत अवचकही में, सिंह सरीखे जागा।
धनि[1] सुत जन धन भवन न भावत, धावत बन बैरागा ॥ २ ॥
हरखित हंस दसा चलि आयो, दुरि गयो दुरमत कागा।
पाँचहुँ को परपंच न लागै, कोटि करै जौं दागा[2] ॥ ३ ॥
साँच अमल तहँ झूठ न झाँकै, दया दीनता पागा।
सत्त सुकृत संतोष समानो, ज्यों सूई मध धागा ॥ ४ ॥
लै मन पवन उरध को धावै, उपजु सहज अनुरागा।
धरनी प्रेम मगन जन कोई, सोइ जन सूर सुभागा ॥ ५ ॥

(राग केदार)

॥ १ ॥

अजहु न गुरु चरनन चित दैहौ ॥ टेक ॥
नाना जोनि भटकि भ्रमि आये, अब कब प्रेम तीरथहिं न्हैहौ ॥१॥
बड़ कुल बिभव भरम जनि भूलो, प्रभु पैहौ जब दास कहैहौ ॥२॥
एह संगति दिन दस कि दसा है, कथि कथि पढ़ि पढ़ि पार न पैहौ।३।
करम भार सिर तें नहि उतरै, खंड खंड महि-मंडल धैहौ[3] ॥४॥
बिनु सतगुरु सतलोक न सूझै, जनमि जनमि मरि मरि पछितैहौ ॥५॥
धरनी ह्वैहौ तबही साँचे, सतगुरु नाम हृदय ठहरैहौ ॥६॥

(२)

अजहुँ मिलो मेरे प्रान-पियारे।
दीनदयाल कृपाल कृपानिधि, करहु छिमा अपराध हमारे ॥१॥
कल न परत अति बिकल सकल तन, नैन सकल जनु[4] बहत पनारे।
माँस पचो अरु रक्त रहित भे, हाड़ दिनहुँ दिन होत उघारे ॥२॥

(१) स्त्री। (२) दग़ा। (३) दौड़ोगे। (४) जैसे।

नासा नैन स्रवन रसना रस, इंद्री स्वाद जुआ जनु हारे ।
दिवस दसो दिसि पंथ निहारति, राति बिहात[1] गनत जस तारे ॥३॥
जो दुख सहत कहत न बनत मुख, अंतरगत के हौ जाननहारे ।
धरनी जिव झलमलित दीप ज्यों, होत अंधार करो उँजियारे ॥४॥

॥ राग बिहागरा ॥

(१)

जग में सोई जीवनि जिया ।
जा के उर अनुराग उपजो, प्रेम प्याला पिया ॥ १ ॥
कमल उलटो भर्म छूटो, अजप जप जपिया ।
जनु अँधारे भवन भीतर, बारि राखो दिया ॥ २ ॥
काम क्रोध समोधियो, जिन्ह घरहिं में घर किया ।
माया के परिपंच जेते, सकल जानो छिया ॥ ३ ॥
बहुत दिन को बहुत अरुझो, सहजहीं सरुझिया ।
दास धरनी तासु बलि बलि, भूँजियो जिन्ह बिया[2] ॥ ४ ॥

(३)

रमैया राम भजि लेहु हो, जा तें जनम मरन मिटि जाय ॥टेक॥
सहर बसै एक चौहटा हो, एकै हाट परवान ।
ताही हाट के बानिया हो, बनिज न भावत आन ॥ १ ॥
तीनि तरे एक ऊपरे हो, बीच बहै दरियाव ।
कोइ कोइ गुरुगम ऊतरे हो, सुरति सरीखे नाव ॥ २ ॥
तीनि लोक तीनि देवता हो, सो जाने नर लोय ।
चौथे पद परिचै भई हो, सो जन बिरले कोय ॥ ३ ॥
सोइ जोगी सोई पंडित हो, सोइ बैरागी राव ।
जो एहि पदहिं बिलोइया हो, धरनी धरे ता को पाँव ॥ ४ ॥

(४)

पिय बड़ सुन्दर सखि, बनि गैला सहज सनेह ॥टेक॥

---

(१) बीतती है । (२) बीज ।

जे जे सुन्दरि देखन आवै, ता कर हरि ले ज्ञान।
तीन भुवन के रूप तुलै नहिं, कैसेके करउँ बखान ॥१॥
जे अगुवा[1] अस कइल धरतुई[2], ताहि नेवछावरि जाँव।
जे बाम्हन अस लगन विचारल, तासु चरन लपटाँव ॥२॥
चारिउ ओर जहाँ तहँ चरचा, आन के नाँव न लेइ।
ताहि सखी की बलि बलि जैहौं, जे मोरी साइति[3] देइ ॥३॥
झलमल झलमल झलकत देखो, रोम रोम मन मान।
धरनी हर्षित गुन गन[4] गावै, जुग जुग है जनि आन ॥४॥

(४)

अवचक आइ गैला पिया कै सनेसवा, ताखन[5] उठलिउँ जागि रे।
राम राम करि घर से निकसलिउँ, जे जहँ से तहँ त्यागि रे ॥१॥
सत कै सिंधोरा कर पर मोरा, प्रेम पटम्बर पागि रे।
बाजन लागु चपल चौघरिया, चित्त चतुरता भागि रे ॥२॥
पूर परी कुरखेतहिं[6] चढ़लिउँ, जन परिजन से बागि[7] रे।
करम भरम कर चिता सजावल, ब्रह्म आगिन तेहिं लागि रे ॥३॥
धरनी धनि तहँ भक्ति भाँवरो, चित अनुभै अनुरागि रे।
अबकी गवना बहुरि नहिं अवना, बोलहु राम सुभागि रे ॥४॥

॥ राग पंजर ॥

(१)

तुहि अवलंब हमारे हो।
भावै पगु नाँगे करो, भावै तुरय[8] सवारे हो ॥ १ ॥
जनम अनेकन बादि गौ, निजु नाम बिसारे हो।
अब सरनागत रावरी, जन करत पुकारे हो ॥ २ ॥
भवसागर बेरा परो, जल माँझ मँझारे हो।
सतत[9] दीनदयाल हो, कर पार निकारे हो ॥ ३ ॥

---

(१) बिचौलिया। (२) सगाई। (३) मुहूर्त्त (व्याह का)। (४) अनेक। (५) तुर्त। (६) कुरुक्षेत्र अर्थात् रणभूमि। (७) अलग होकर। (८) घोड़ा। (९) निरंतर।

धरनी मन बच कर्मना, तन मन धन वारे हो।
अपनो बिरद निबाहिये, नहिं बनत बिचारे हो ॥ ४ ॥

(२)

प्रभु तो बिनु को रखवारा ॥ टेक ॥
हौं अति दीन अधीन अकर्मी, बाउर बैल बेचारा।
तू दयाल चारो जुग निस्चल, कोटिन्ह अधम उधारा ॥ १ ॥
अबके अजस अवर नहिं लागै, सरबस तोहिं बड़ाई।
कुल मरजाद लोक लज्जा तजि, गह्यो चरन सरनाई ॥ २ ॥
मैं तन मन धन तोपर वार्यो, मूरख जानत ख्याला।
ब्याउर[1] बेदन[2] बाँझ न बूझै, बिनु दागे नहिं छाला ॥ ३ ॥
तुलसी भूषन भेष बनायो, स्त्रवन सुन्यो मरजादा।
धरनी चरन सरन सच पायो, छुटिहै बाद बिबादा ॥ ४ ॥

(३)

प्रभू तू मेरो प्रान पियारा ॥ टेक ॥
परिहरि[3] तोहि अवर जो जाचै, तेहि मुख छीया छारा।
तो पर वारि सकल जग डारौं, जौ बसि होय हमारा ॥१॥
हिन्दु के राम अल्लाह तुरुक के, बहु बिधि करत बखाना।
दुहुँ को संगम एक जहाँ, तहवाँ मेरो मन माना ॥२॥
रहत निरंतर अंतरजामी, सब घट सहज समाया।
जोगी पंडित दानि दसो दिसि, खोजत अंत न पाया ॥३॥
भीतर भवन भयो उँजियारो, धरनी निरखि सोहाया।
जा निति देस देसंतर धावो, सो घटहीं लखि पाया ॥४॥

(४)

मो सों प्रभु नाहिं दुखित, तुम सों सुखदाई ॥टेक॥
दीनबन्धु बान तेरो, आइ करु सहाई।
मो सों नहिं दीन और, निरखो नर लोई ॥ १ ॥

(१) बच्चे वाली स्त्री। (२) पीड़ा। (३) छोड़ कर।

पतित-पावन निगम कहत, रहत हौ कित गोई[१]।
मो सों नहिं पतित और, देखो जग टोई ॥ २ ॥
अधम को उधारन तुम, चारो जुग ओई।
मो तें अब अधम आहि, कवन धौं बड़ोई ॥ ३ ॥
धरनी मन मनिया, एक ताग में परोई।
आपन करि जानि लेहु, कर्म फंद छोई[२] ॥ ४ ॥

॥ कबित्त ॥

(१)

किया षट कर्म, तन दया नहिं धर्म,
तजो नहिं भर्म, किमि कर्म छूटै।
दियो बहु दान, करि बिबिध बिधान,
मन बढ़ो अभिमान जम प्रान लूटै ॥
जग्य अरु जोग, तप तीरथ ब्रत नेम करि,
बिना प्रभु-प्रेम, कलि काल कूटै।
दास धरनी कहै, कौन बिधि निर्बहै,
जबै गुरुज्ञान तब गगन फूटै ॥

(२)

जीव की दया जेहि जीव ब्यापै नहीं,
भूखे न अहार प्यासे न पानी।
साधु से संग नहिं सब्द से रंग नहिं,
बोलि जानै न मुख मधुर बानी ॥
एक जगदीस को सीस अरपै नहीं,
पाँच पच्चीस बहु बात ठानी।
राम को नाम निज धाम बिस्राम नहिं,
धरनी कह धरनि मों धृग सो प्रानी[३] ॥

(१) गुप्त। (२) छोड़ा कर, काट कर। (३) पृथ्वी पर ऐसे जीव को धिक्कार है।

(३)

अधो मुख बास दस मास अवकास नहि,
जठर में अनल की आँच बारो।
बालपन बीति गौ तरुनपन तेज भौ,
परे बिष स्वाद धन धाम नारी॥
बृद्धपन आइ गौ चौंकि चित चेत भौ,
बिना जगदीस जम त्रास भारी।
बूझि मन देखु तोहिं सूझि कछु परत नहिं,
धरनी तजि चलै गो हाथ झारी॥

(४)

दुर्लभ देंह बिदेह कहा भयो,
अंत को है पुहमी सटना[१]।
छिति[२] छार परो मुख भार[३] जरो,
तन गार[४] परो प्रभु जा घट ना॥
धरनी धरनो[५] धरु एक धनी पगु,
जो कलि को फंद चहै कटना।
तजु तीरथ वर्त विधान सबै,
करु नाम निरंजन की रटना॥

(५)

मौत महा उत्कंठ[६] चढ़ै, नहिं सूझत अंध अभागहु रे।
चित चेतु गँवार बिकार तजो, जब खेत पड़े कित भागहु रे॥
जिन बुंद बिकार सुधार कियो, तन ज्ञान दियो पगु ता गहु रे।
धरनी अपने अपने पहरे, उठि जागहु जागहु जागहु रे॥

(६)

दिन चार को संपति संगति है, इतने लगि कौन मनो करना।
इक मालिक नाम धरो दिल में, धरनी भवसागर जो तरना॥

---

(१) गर्द में मिलना। (२) पृथ्वी पर ऐसे जीव को धिक्कार है। (३) भाड़। (४) मिट्टी। (५) टेक, धारना। (६) बेग या जोश के साथ।

निज हक पहिचानु हकीकत जानु, न छोड़ु इमान दुनी घर ना ।
पग पीर गहो पर-पीर हरो, जिवना न कछू हक है मरना ॥

(७)

जीवन थोर बचा[1] भौ भोर,[2] कहा धन जोरि करोर बढ़ाये ।
जाव दया करु साधु की संगति, पैहौ अभय पद दास कहाये ॥
जा सन[3] कर्म छपावत हौ, सो तो देखत है घट में घर छाये ।
बेग भजो[4] धरनी सरनी, ना तो आवत काल कमान चढ़ाये ॥

(८)

आवत जात परवाह सदा, धन जोरि बटोरि धरो न कबाहीं ।
तू महराज गरीब-नेवाज, अकाज सकाज की लाज तुमाहीं ॥
जो हिरदे हरि को पद पंकज, सो मत मो मन तें बिसराहीं ।
कह धरनी मनसा बच कर्मना, मोहिं अवर अवलंबन नाहीं ॥

(९)

ज्ञान को बान लगो धरनी, जन सोवत चौंकि अचानक जागे ।
छूटि गयो बिषया बिष बंधन, पूरन प्रेम सुधा रस पागे ॥
भावत बाद बिबाद निखाद,[5] न स्वाद जहाँ लगि सो सब त्यागे ।
मूँदि गईं अँखियाँ तब तें, जब तें हिये में कछु हेरन लागे ॥

(१०)

जननी पितु बंधु सुता सुत संपति, मीत महा हित संतत जोई ।
आवत संग न संग सिधावत, फाँस मया परि नाहक खोई ॥
केवल नाम निरंजन को जपु, चारि पदारथ जेहि तें होई ।
बूझि बिचारि कहै धरनी, जग कोइ न काहु के संग सगोई ॥

(११)

दियो जिन्ह प्रान कया सुख सम्पति, बीच मिले तिन्ह नेह न कौ[6] रे ।
होतो कहाँ औ कहा कहि आयो, सो क्यों बिसराय करौ कछु और ॥

(१) बच्चा । (२) सबेरा । (३) से । (४) भागो ।(५) निषेध । (६) कर ।

जोग औ त्याग बैराग गहो, धरनी धन काज कहा पचि दौरे।
अंतहिं तो तजिहै सब तोहि, सो तू न तजै अबहीं क्यों न बौरे॥

॥ ककहरा ॥

(१)

प्रथम करता पुरुष को, कर जोरि मस्तक नाउँ।
ककहरा निरवारि निर्मल, बोलि सबै सुनाउँ॥ १ ॥
क—कया परिचै करहु प्रानी, कवन अवसर जात।
ख—खोजि ले निजु बस्तु अपनी, छोड़ि दे बहु बात॥ २ ॥
ग—ग्यान गुरु को कान सुनि, धरु ध्यान त्रिकुटी पास।
घ—घूमते एक चक्र भँवरा, सेस उड़त अकास॥ ३ ॥
ङ—उदै चंद अनंद उर अति, मोति बरसै धार।
च—चमक बिजुली रेख दहुँ दिसि, रूप को नहिं पार॥ ४ ॥
छ—छोट मोट न काहु जानौ, सबै एक समान।
ज—जुक्ति जानै मुक्ति पावै, प्रगट पद निरबान॥ ५ ॥
झ—झूठ झगर पवारि[1] डारौ, झारि झटकि बिछाव।
ञ—इंद्रियन के स्वाद कारन, आपु जनि जहँड़ाव[2]॥ ६ ॥
ट—टेक टंडस छोड़ि दे, करु 'साध सब्द बिबेक[3]।
ठ—ठौर सो ठहराइ ले, जहँ बसत साहब एक॥ ७ ॥
ड—डार पात समूह साखा, फिरत पार न पाव।
ढ—ढोल मारत साध जन, नहि बहुरि ऐसो दाव॥ ८ ॥
न—नाम नौका चढ़ो चित दे, बिना बाद बिबाद।
त—तहाँ लै मन पवन राखो, जहाँ अनहद नाद॥ ९ ॥
थ—थकित होइ हैं पाँच, अरु पच्चीस रहि हैं थीर।
द—दसें द्वारे झलमलै, मनि मोति मानिक हीर॥१०॥
ध—धोख धंधा जगत बंधा, कथै बहुत उदास।

(१) फेंको। (२) ठगाव। (३) ढँढ़सी यानी पाखंडियों का संग छोड़ कर शब्द-अभ्यासी बिबेकी साध का संग कर।

न—निरबहैगो[1] तबहिं जब अभि[2], अंतरे बिस्वास ॥११॥
प—प्रेम जा घट प्रगट भो, तहँ बसै पुन्न न पाप।
फ—फेरि मन तहँ उलटि धरु, जहँ उठत अजपा जाप ॥१२॥
ब—बिना मूल के फूल फूल्यो, हिये माँझ मँझार।
भ—भेदिया कोइ जानिहै, नहिं और जाननहार ॥१३॥
म—मूल मंत्र ओंकार अद्भुत, निराधार अनूप।
य—यहाँ पहुँचहि कोई जन, जहँ छाँह नाहीं धूप ॥१४॥
र—राम जपु निजु धाम धवला[3], मन हृदै करु बिसराम।
ल—लोक चार बिचार परिहरु, प्रीति करु तेहिं ठाम ॥१५॥
व—वारि तन मन धन जहाँ लौं, जिव पवन अरु प्रान।
श—समुझि आपा मेटि अपनो, सकल बुधि बल ज्ञान ॥१६॥
ष—खैर रँड़ बबूर सेहुँड़, सो न फरिहैं दाख[4]।
स—सर्ब सुन्न के सुन्न एकै, दूसरी जनि राख ॥१७॥
ह—होत नर परमातमा तब, आतमा मिटि जात।
रहै अचल अबोल अस्थिर, कहै अबिचल बात ॥१८॥
त्त—छुए ताहि पबित्र हूजै, पुजै मन की आस।
सही करिहैं संत जन, जत[5] कही धरनीदास ॥१९॥

(२)

क—कायापुर में अलख भूलै, तहाँ करु पैसार[6]।
सुरत द्वादस लाइ कै, तुम बाद करहु हँकार[7] ॥ १ ॥
ख—खड़ग गहि गुरु ज्ञान को, तब मारु पाँच पचीस।
उनमुनी घर रहनि करि, तुम जपो जन जगदीस ॥ २ ॥
ग—गगन धुनि मन मगन भो, करु प्रेम तत्त प्रकास।
ज्ञान अंकुस देइ कै, गज[8] राखु त्रिकुटी पास ॥ ३ ॥

(१) निर्बाह होगा। (२) हृदय। (३) सफेद। (४) छोहारा। (५) यति=जैसा कि। (६) पैठारी, पहुँच। (७) अहंकार। (८) हाथी अर्थात् मन।

घ–घेरि है मन मोह माया, कहूँ नाहिं निकार।
संत जन जेहि पंथ कहहीं, ताहि चेतु गँवार ॥ ४ ॥
ङ–अवधपुर[१] में जाइ के, तू देखु ब्रह्म सुहाव।
तहँ लोकचार[२] विचार नाहीं, बेद को नहिं भाव ॥ ५ ॥
च–चारि दिन सुख कारने, नर भुलो सकल सयान।
काम क्रोधहिं कैद करिके, परसु पद निर्बान ॥ ६ ॥
छ–छुटा भौ अभि[३] अंतरे, मन गयो सहज अकास।
तहँ सुखमना दह[४] कमल फूलो, सेत भँवर तेहि पास ॥ ७ ॥
ज–जनम दुर्लभ जात है, नहिं जक्त कोउ पतियाय।
बहुरि न ऐसो दाँव पैहौ, लेहु उरध बनाय ॥ ८ ॥
झ–झपी है[५] जहँ बस्तु झिलमिल, अभय घर उँजियार।
तहाँ अमृत बुंद बरसै, जोगि करत अहार ॥ ९ ॥
ञ–आदि इंद्र सुकादि[६] खोजहिं, पार किनहुँ न पाय।
तुम आपु अपनी सीख रहि कै, द्वार दसम समाय ॥१०॥
ट–टारि दे निजु भजन सेतो, जन्म जन्म बिकार।
एक भक्ति बिनु मुक्ति नाहीं, कोटि करहु बिचार ॥११॥
ठ–ठाँव सोई सराहिये, जहँ बरसई जल धार।
इक पिंगल बिच अंतरे, तहँ प्रेम धुनि ओंकार ॥१२॥
ड–डंभ औ षट स्वाद जारो, ब्रह्म अग्नि प्रचारु।
आपु अपनी सीष रहिकै, द्वादसो संभारु ॥१३॥
ढ–ढरन[७] कठिन ए यार देखो, नाथ की यह रीति।
तहँ जाति पाँति बिसाइ नाहीं, भक्तजन सों प्रीति ॥१४॥
न–नाम को सतभाव राखो, उर्ध सों करु नेह।
जब अभयपुर कहँ परग दीन्हो, छुटो भरम संदेह ॥१५॥

---

(१) संतों का दसवाँ द्वार। (२) लोकाचार। (३) हृदय। (४) तालाब। (५) छिपी है। (६) शकदेव आदिक ऋषि मुनि। (७) प्रन।

त–तहीं पूरन रहनि करु, जहँ सक्ति सीव निवास।
ब्रह्मादि औ सनकादि खोजहिं, संत करहिं निवास ॥१६॥
थ–थीर नाहीं जगत देखो, जस सलिल[1] में नीर।
जात जनमत मरत पुनि पुनि, करत कृत बेपीर[2] ॥१७॥
द–देंहि में कछु दया राखो, प्रीति करु वहि देस।
सुरति के घर निरति कथिया, ब्रह्म नटवर[3] भेस ॥१८॥
ध–ध्यान धरु निसु बासरे, जहँ उठत अजपा जाप।
बिना रसना मंत्र ठहरै, छुटै जम को दाप[4] ॥१९॥
न–नाम रसना पाइ रे, नहिं दूसरो अस स्वाद।
यह मूढ़ को समझाइ कै, सब तजो बाद बिबाद ॥२०॥
प–प्रेम पवन ले तहाँ राखो, जहाँ जोति अपार।
तब पाप पुन्न नसाइया, जब प्रगट ह्वै अनुसार ॥२१॥
फ–फरन लागो प्रेम तरु[5], जहँ गगन गूफा माहिं।
तहँ भानु ससि कै उदै नाहीं, होत धूप न छाँहिं ॥२२॥
ब–बरतिये निसु बासरे, जहँ ब्रह्म बिस्नु महेस।
निगम को जहँ गम्म नाहीं, जपहिं ध्रुव फनि सेस ॥२३॥
भ–भेद पायो भजन को, तब अवर नाहिं सुहाय।
जस कृपिन कछु कनक पायो, लियो हृदय जुड़ाय ॥२४॥
म–मोह माया जाल में, नर परो है ससार।
तुम जोग जुक्ति बिचारि करि कै, उतरु भव जल पार ॥२५॥
य–यरा मरन[6] दुख बहुत पायो, लियो सरन तिहार।
अब नाम नेम निबाहये, हौं संत तुव बलिहार ॥२६॥
र–राति दीवस तहाँ नाहीं, होत साँझ न प्रात।
कोटिन महँ कोइ जानिहै, नहिं अवर बूझै बात ॥२७॥

(१) सरित = नदी। (२) बगैर गुरू के मनमुख करनी करता है। (३) बाँका, अनूठा। (४) घमंड। (५) पेड़, वृक्ष। (६) जरा मरन।

ल—लोक लाज सों भाजि करिकै, मिलो हरि कहँ जाय ।
जस मीन जल के अंतरे, तस रहे संत समाय ॥२८॥
व—व्योम[१] ऊपर नाद अनहद, तहँ उठै झनकार ।
कोइ प्रेमि बिरहिनि जानिहै, नहिं अवर जाननहार ॥२९॥
स—स्वर्ग-मुख एक सर्प ऊड़े[२], रहे सुन्न समाय ।
जो देखिया सो मगन है, नहिं दूसरो पतियाय ॥३०॥
ष—खोह[३] में एक पर्बतो, तहँ बनो भिन्न अवास[४] ।
संत जन तेहिं भवन अटके, सुनत अनहद बास ॥३१॥
श—सकल संसय त्यागि के, तुम सेव पुरुष पुरान ।
जिन पाइया वा ब्रह्म को, तिन भयो ऐसो ज्ञान ॥३२॥
ह—हरख भा अभि अंतरे, मन मगन वहँ खिचि लाग ।
बिना मूल के फल फूल्यो, देखि षटपद जाग[५] ॥३३॥
क्ष—छाया नाहीं अपनि देखो, अवर के कहु मोर ।
जब अभयपुर को परग दीन्हा, छुटो हाथो घोर ॥३४॥
चौंतीस आखर[६] जोग बरनन, काल कर्म बिचार ।
धरनिहिं निज प्रभु जानिये, अब राखु सरन मुरार ॥३५॥

(३)

क—करता आदि अंत अबिनासी । करता अगम अगोचर बासी ॥
करता केवल आपहिं आप । करता के कोउ माय न बाप ॥
ख—खासा होय सो करतहिं जाना । खाम[७] खलक धंधा लपटाना ॥
खुसी होत धन आवत हाथे । खाली जात चले नहिं साथे ॥
ग—गुरु के चरन गहो चित लाई । गुरु सतमारग देत दिखाई ॥
गह्यो जो दृढ़ करि अधर अधारा । गयो उतरि सो भवजल पारा ॥
घ—घट घट बसे कतहुँ नहिं सूना । घाट लखे जेहि पुरबल पूना[८] ॥

---

(१) आकाश के परे । (२) स्वर्ग को मुंह किये कुँडलिना नाड़ी है । (३) कंदरा या घाटी पहाड़ की । (४) जुदा जुदा मंदिर या दीप बने हैं । (५) षटपद भंवरा को कहते हैं यानी भंवरा रूपी मन जागा । (६) अक्षर । (७) कच्चे यानी झूठे । (८) पुन्य ।

घट में जो आवे बिस्वासा । घर में बैठे बिलसि बिलासा ॥
उ—उत्तम जनम जगत में ता को । उरध उलटि चढ़ो मन जा को ॥
उज्जल मनसा हरि ब्रत धारी । उनतें कहो कवन अधिकारी ॥
च—चंचल चित अस्थिर करि राखो । चंचल बचन कबहुँ जनि भाखो ॥
चारि दिना जगजीवन आथी[1] । चलत बार कोउ संग न साथी ॥
छ—छिया बुंद पर छबि लपटाई । छिया सोई छबि देखि लोभाई ॥
छित[2] महँ करि ले राम सनेही । छिन यक माहिं छुटेगो देही ॥
ज—जक्त माहिं जगदीस पियारा । जो बिसरावे सो चंडारा ॥
जिन जिन जगजीवन ब्रत धारी । जरा मरन की संसय टारी ॥
झ—झगरा करै कथै सुधवाई । झाँझरि नाव पार कस जाई ॥
झूठ कहत जेहिं त्रास न आवै । झोरि झोरि जम ताहि झुलावै ॥
ञ—इंद्री स्वाद रहे अरुझाई । ईसुर भक्ति हृदय बिसराई ॥
इहै प्रमान करो मन माहीं । इह अवसर पैहौ पुनि नाहीं ॥
ट—टहल करो साधू जन के री । टार बार परिहरि[3] बहुतेरी ॥
टंडस[4] तें बाढ़े जंजाला । टापा[5] लेइ पुनि छोपै काला ॥
ठ—ठाकुर एक है सिरजनहारा । ठाँव ठाँव दे सबहिं अहारा ॥
ठाकुर छोड़ि आन मन लावै । ठावहिं आपन काज नसावै ॥
ड—डारी धरि मूलहि बिसराय । डहँकि लोक पाखंडहि खाय ॥
डर नहिं आवै ता दिन के रा । डोलत अंध बकै बहुतेरा ॥
ढ—ढोलिया[6] साधु सदा संसारा । ढाल[7] धरो सतसंग उबारा ॥
ढाल कहाँ होइ रहे बेदानी[8] । ढरकि जाइहौ ज्यों घट पानी ॥
न—नाम निरंजन करो उचारा । नाम एक संसार उबारा ॥
नाम नाव चढ़ि उतरहि दासा । नाम बिहूने[9] फिरहिं उदासा ॥

---

(१) है, । (२) पृथ्वी, संसार । (३) छोड़ कर । (४) बाहरी क्रिया यानी दिखावे का काम । (५) जिस से छोप कर मछली मारते हैं । (६) अपनी ढोल बजाने वाला अर्थात अपनी तारीफ करने वाला । (७) जिससे तलवार की वार रोकते हैं । (६) बेदांती । (९) खाली ।

त—तारन तरन अवर नहिं कोई । ताहि देखु मूरख नर लोई ॥
तुलसी पहिरि तमोगुन त्यागे । ताके आदि अंत नहिं खाँगे[१] ॥
थ—थापन[२] अथपन[३] थापनहारा[४] । थीर करै मन गगन मँझारा ॥
थिर भयो मन छूटेव जंजाला । थरथर थहरै ता को काला ॥
द—दुरलभ तन नर देंही पाय । दाव इहै हरि भक्ति दृढ़ाय ॥
देखा देखी मरत अनारी । देखु आपने हिये बिचारी ॥
ध—धर्म दया कीजे नर प्रानी । ध्यान धनी को धरिये जानी ॥
धन तन चंचल थिर न रहाई । "धरनी" गुरु की करु सेवकाई ॥
न—नहिं तामस नहिं तृस्ना होई । नर अवतार देव गन सोई ॥
निरमल पद गावै दिन राती । निरमल सोभै कवनिहुँ जाती ॥
प—परसुराम अरु बिरमा माई । पुत्र जानि जग हेतु बड़ाई ॥
प्रगटि धरनि ईसुर करि दाया । पूरे भाग भक्ति हरि पाया ॥
फ—फोकट फंद परे नर भूले । फिरि फिरि गर्भ अधोमुख झूले ॥
फेरै अरध उरध लै लावै । फिर नाहीं भवसागर आवै ॥
ब—बहुत गये तरि यही उपाई । बहुत रहे यहि दिसि अरुझाई ॥
बड़े पुन्न भव मानुष देंही । बाद जात बिनु राम सनेही ॥
भ—भेष बनाय कपट जिय माहीं । भवसागर तरिहैं सो नाहीं ॥
भाग होय जा के सिर पूरा । भक्ति काज बिरले जन सूरा ॥
म—मन गुड्डी गहि गगन चढ़ावै । ममता तजि समता उर छावै ॥
मधुर दीनता लघुता भाखै । मन बच कर्म एक ब्रत राखै ॥
य—युक्ति बिना कोइ मुक्ति न पावै । यो ब्रह्मंड खंड लगि धावै ॥
याके[५] हिय ना भेद समाना । यप[६] तप संयम करि पछिताना ॥
र—राम नाम सुमिरो रे भाई । राम नाम संतन सुखदाई ॥
राम कहत जम निकट न आवै । रिग यजु साम अथर्वन[७] गावै ॥

(१) घटी । (२) जिसका स्थापन किया जाता है । (३) जिसका स्थापना नहीं हो सकता । (४) स्थापन करने वाला यानी सब का करता मन । (५) जाके । (६) जप । (७) बेदों के नाम ।

ल—लछमी जोरि संग जो लेई । लाख उपर दीया जो देई[1] ॥
लोकचार चाटक[2] दिन चारी । लेहु आपनो काज सुधारी ॥
व—वा से कहों सुनो चित लाई । वासर[3] गये बहुत पछिताई ॥
अवलोकहु[4] अपने मन माहीं । अवर प्रकार अंत सुख नाहीं ॥
श—सेत झलाझल झलकै जहाँ । सुरति निरति लव लावो तहाँ ॥
सहजहिं रहो गहो सेवकाई । सन्मुख मिलिहै आतमराई ॥
ष—खोजत धन नर फिरत बेहाला । खबरि न जाने पाछे काला ॥
खोटा बहुरि जाय खोटसारा । खरा चहूँ दिसि चलन पियारा ॥
स—सार बस्तु ढूँढ़हु रे भाई । साध कि संगति रहो समाई ॥
सत मारग बिनु मुक्ति न होई । साँच सब्द सुनियो सब कोई ॥
ह—होहु दयाल बिसंभर देवा । हम नहिं जानहिं पूजा सेवा ॥
हमरे नहिं कछु करम निकोई[5] । हरि किरपा होई सो होई ॥
छ—छोड़हु फाँसी करम गोसाँई । छोरि लेहु जम तें बरियाई ॥
छोटी मति मैं निपट अनारी । छुटे जानि इक नाम तुम्हारी ॥
करम ककहरा जग लिपटाना । संत ककहरा कोइ कोइ जाना ॥
जा घट भा अनुभव परगासा । तिन की बलि बलि धरनीदासा ॥

॥ अलिफ़नामा ॥

अलिफ़—आप अन्दर बसै, बे—बतलावै दूर ।
ते—तन में तहक़ीक़ कर, अलिफ़ अजाएब नूर ॥ १ ॥
से—सालिस[6] होय समुझि ले, जीम—जहान बसीर[7] ।
हे—हयात[8] को ख़ाक में, ख़े—आख़िर होत ख़मीर[9] ॥ २ ॥
दाल—दिलहि में दोस्त है, ज़ाल—ज़िकर[10] कर पेश ।
रे—रहीम[11] के राह चढ़, ज़े—ज़िन्दा दरवेश ॥ ३ ॥

---

(१) अगले जमाने में लाल रुपये के खजाने पर अखंड दीपक बालते थे। (२) चेटक = धोखा। (३) अवसर। (४) देखो। (५) नेक, शुभ। (६) पंच, बिचौलिया। (७) सुझाका। (८) जीवन, ज़िन्दगी। (९) मेला। (१०) सुमिरन। (११) दयाल।

सीन—सपेद सुबास गुल, शीन—शिकम[१] दर माँहिं ।
साद—सुरत साबूत है, ज़ाद—ज़मीर झराहि[२] ॥ ४ ॥
तो—तालिब[३] दीदार होय, जो—ज़ालिम उठ जाग ।
ऐन—अक़ीदा[४] बाँध ले, ग़ैन—ग़ाफ़िली त्याग ॥ ५ ॥
फ़े—फ़ाज़िल अन्दर पढ़े, क़ाफ़—क़ोरान तमाम ।
क़ाफ़—करे मति काहिली,[५] लाम—लेत निज नाम ॥ ६ ॥
मीम—मेरा माशूक़ है, नूँ—नादिर[६] कोइ जान ।
वाव—वोही की फ़िकर में, हे—हरदम रह मस्तान ॥ ७ ॥
लाम—लेहु ठहराय के, अलिफ़—अकेला सोय ।
हमज़ा—ये मुरशिद बिना, धरनी लखै न कोय ॥ ८ ॥

॥ पहाड़ा ॥

एका एक मिलै गुरु पूरा, मूल मंत्र जो पावै ।
सकल संत की बानी बुझै, मन परतीत बढ़ावै ॥ १ ॥
दूआ दुई तजै जो दुबिधा, रजगुन तमगुन त्यागै ।
सतगुरु मारग उलटि निरेखै, तब सोवत उठि जागै ॥ २ ॥
तीया तीन त्रिबेनी संगम, सो बिरले जन जाना ।
तृस्ना तामस छोड़ि दे भाई, तब करु वहँ प्रस्थाना ॥ ३ ॥
चौथे चारि चतुर नर सोई, चौथे पद कहँ लागी ।
हँसि कै परम हिंडोलना झूलै, निरखत भा अनुरागी ॥ ४ ॥
पँचयें पाँच पचीसहिं बस करि, साँच हिये ठहरावै ।
इँगला पिंगला सुखमन सोधै, गगन मँडल मठ छावै ॥ ५ ॥
छठयें छवो चक्र को बेधै, सुन्न भवन मन लावै ।
बिगसत कमल काया करि परिचै, तब चंदा दरसावै ॥ ६ ॥
सतयें सात सहज धुनि उपजै, सुनि सुनि आनँद बाढ़ै ।
सहजहिं दीनदयाल दया करि, बूड़त भवजल काढ़ै ॥ ७ ॥

---

(१) पेट । (२) मन की सफाई करो । (३) माँगने वाला । (४) प्रतीत । (५) सुस्ती । (६) अनूठा, अचरजी ।

अठयें आठ अकासहिं निरखो, दृष्टि अलोकन होई।
बाहर भीतर सर्ब निरंतर, अंतर रहै न कोई॥ ८ ॥
नवें नवो दुवारहिं निरखै, जगमग जगमग जोती।
दामिनि दमकै अमृत बरसै, निझर झरै मनि मोती॥ ९ ॥
दसयें दस दहाइ पाइ कै, पढ़ि ले एक पहारा।
धरनीदास तासु पद बंदे, अहि निसु बारम्बारा॥१०॥

॥ बारहमासा ॥

॥ दोहा ॥

चैत चलहु मन मानि कै, जहँ बसै प्रान पियार।
हिलि मिलि पाँच सहेलरी, पंच-पाँच[1] परिवार॥ १ ॥

॥ छंद ॥

परिवार जोरि बटोरि लीजै गोरि खोरि[2] न लाइये।
बहुरि समय सरूप अस ना जानिये कब पाइये॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

बैसाखहिं बनि ठनि धनी[3], साजहु सहज सिंगार।
पहिरो प्रेम पटम्बारो, सुनि लो मंत्र हमार॥ ३ ॥

॥ छंद ॥

सुनि लेहु मंत्र हमार सुन्दरि हार पहिरु एकावरी।
छोड़ि मान गुमान ममता अजहुँ समझहु बावरी॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

जेठ जतन करु कामिनी, जन्म अकारथ जाय।
जोबन गरब भुलाहु जनि, कछु करि लेहु उपाय॥ ५ ॥

॥ छंद ॥

करि लेहु कछुक उपाय नहिं दुख पाय फिर पछिताइ है।
जब गाँठि को गथ[4] नाटि[5] है तब ढूँढ़ते नहिं पाइ है॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

अजहुँ असाढ़ समुझि चित, यहि दिस हित नहिं कोय।
अद्भुत अरथ दरब सब, सुपन अपन नहिं होय॥ ७ ॥

(१) पच्चीस प्रकृति। (२) भरम। (३) धन = स्त्री। (४) बँधा हुआ। (५) गिर जाना।

॥ छंद ॥

अपन नहिं कछु सुपन सब सुख, अंत चलिहो हारि कै।
मातु पितु परिवार पुनि तोहिं, डारि हैं परिचारि कै ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

सावन सकुच करहु जनि, धावन[1] पठवहु चोख[2]।
बहुत दिवस लगि भटकियो, अब जनि लावहु धोख ॥ ९ ॥

॥ छंद ॥

जनि धोख लावहु चोख धावहु, जो कहावहु पीव की।
करत कोटि उपाव चिंता, मेटि है नहिं जीव की ॥१०॥

॥ दोहा ॥

भामिनि भइल जोबन तन, भजि लेहु भादौं मास।
पत न रहहि निजु पती बिनु, ह्वैहै जग उपहाँस ॥११॥

॥ छंद ॥

होइ है उपहाँस जग में, मान मानन जनि करो।
समुझि नेह सनेह स्वामी, हरखि लै हिरदै धरो ॥१२॥

॥ दोहा ॥

आसुन[3] बिरह बिलासिनी, मिलहु कपट पट खोल।
नाहिं तो कंत रिसाइ हैं, मुख हूँ नाहीं बोल ॥१३॥

॥ छंद ॥

मुख बोलि नहिं कछु आइ है, भरमाइ है घर घर घरे।
तब कहा कूप खनाइ हौ,[4] जब आगि छप्पर पर परे ॥१४॥

॥ दोहा ॥

कातिक कुसल तबहि सखी, जबहि भजो पिय जानि।
बहुरि बिछोह कबहुँ नहीं, ह्वैहौ जुग जुग रानि ॥१५॥

॥ छंद ॥

जुग रानि ह्वैहौ जानि जिय धरि, दानि[5] कोइ न दूसरो।
हित सारि[6] खेत बिसारि अपनो, बीज डारत ऊसरो ॥१६॥

---

(१) हरकारा। (२) जल्दी। (३) कुवार। (४) तब कुवाँ खोदा कर क्या करोगे। (५) दानी, दाता। (६) अच्छा, उपजाऊ।

॥ दोहा ॥

अगहन उत्तर दिये सखि, हम अबला[1] अवतार।
जतन करत ना बनत कछु, कठिन कुटिल संसार ॥१७॥

॥ छंद ॥

कुटिल यह संसार, बरु[2] जरि जाइ जोबन ऐसहीं।
निज कंत जो अपनाइ हैं, चलि आइ हैं घर वैसहीं ॥१८॥

॥ दोहा ॥

पूस पलटि प्रभु आयऊ, प्रगटेव परम अनंद।
घर घर सगर[3] नगर सुखी, मिटेव दुसह दुख दुंद ॥१९॥

॥ छंद ॥

दुख दुंद मेटेव चन्द भेंटेव, फंद सबन छुटाइया।
पुलकि[4] बारम्बार ह्वै, परिवार मंगल गाइया ॥२०॥

॥ दोहा ॥

माघ मुदित मन छिनहिं छिन, दिन दिन बढ़त सोहाग।
नैहर भरम भटकि गयो, सासुर संक[5] न लाग ॥२१॥

॥ छंद ॥

नहिं लागु सासुर संक हे सखि, रंक जनु राजा भयो।
निज नाह[6] मिलियो बाँह ग्रिव[7] दै, सकल कलमख दुरि गयो॥२२॥

॥ दोहा ॥

फागुन फरचो अमी फल, भरचो सकल दुख पात।
निसु दिन रहत मगन मन, सो सुख कह्यो न जात ॥२३॥

॥ छंद ॥

कहि जात नहिं सुख ताहि मूरति, सुरति जहँ ठहराइया।
सुनि बिमल बारह मास को, गुन दास धरनी गाइया ॥२४॥

॥ बोध लीला ॥

प्रथमहिं बरनों एकै करता। आदि अंत मधि भरता हरता ॥१॥
तब बंदों सतगुरु के पाँव। परस जो सोवत जीव जगावँ ॥२॥

---

(१) स्त्रो। (२) चाहे। (३) सब। (४) मगन। (५) शङ्का, डर। (६) पति।
(७) गर्दन में।

॥ छंद ॥

अपन नहिं कछु सुपन सब सुख, अंत चलिहौ हारि कै।
मातु पितु परिवार पुनि तोहिं, डारि हैं परिचारि कै ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

सावन सकुच करहु जनि, धावन[1] पठवहु चोख[2]।
बहुत दिवस लगि भटकियो, अब जनि लावहु धोख ॥ ९ ॥

॥ छंद ॥

जनि धोख लावहु चोख धावहु, जो कहावहु पीव की।
करत कोटि उपाव चिंता, मेटि है नहिं जीव की ॥१०॥

॥ दोहा ॥

भामिनि भइल जोबन तन, भजि लेहु भादौं मास।
पत न रहहि निजु पती बिनु, ह्वैहै जग उपहाँस ॥११॥

॥ छंद ॥

होइ है उपहाँस जग में, मान मानन जनि करो।
समुझि नेह सनेह स्वामी, हरखि लै हिरदै धरो ॥१२॥

॥ दोहा ॥

आसुन[3] बिरह बिलासिनी, मिलहु कपट पट खोल।
नाहिं तौ कंत रिसाइ हैं, मुख हूँ नाहीं बोल ॥१३॥

॥ छंद ॥

मुख बोलि नहिं कछु आइ है, भरमाइ है घर घर घरे।
तब कहा कूप खनाइ हौ,[4] जब आगि छप्पर पर परे ॥१४॥

॥ दोहा ॥

कातिक कुसल तबहिं सखी, जबहिं भजो पिय जानि।
बहुरि बिछोह कबहुँ नहीं, ह्वैहौ जुग जुग रानि ॥१५॥

॥ छंद ॥

जुग रानि ह्वैहौ जानि जिय धरि, दानि[5] कोइ न दूसरो।
हित सारि[6] खेत बिसारि अपनो, बीज डारत ऊसरो ॥१६॥

---

(१) हरकारा। (२) जल्दी। (३) कुवार। (४) तब कुवाँ खोदा कर क्या करोगे। (५) दानी, दाता। (६) अच्छा, उपजाऊ।

॥ दोहा ॥

अगहन उत्तर दिये सखि, हम अबला[1] अवतार ।
जतन करत ना बनत कछु, कठिन कुटिल संसार ॥१७॥

॥ छंद ॥

कुटिल यह संसार, बरु[2] जरि जाइ जोबन ऐसहीं ।
निज कंत जो अपनाइ हैं, चलि आइ हैं घर वैसहीं ॥१८॥

॥ दोहा ॥

पूस पलटि प्रभु आयऊ, प्रगटेव परम अनंद ।
घर घर सगर[3] नगर सुखी, मिटेव दुसह दुख दुंद ॥१९॥

॥ छंद ॥

दुख दुंद मेटेव चन्द भेंटेव, फंद सबन छुटाइया ।
पुलकि[4] बारम्बार ह्वै, परिवार मंगल गाइया ॥२०॥

॥ दोहा ॥

माघ मुदित मन छिनहिं छिन, दिन दिन बढ़त सोहाग ।
नैहर भरम भटकि गयो, सासुर संक[5] न लाग ॥२१॥

॥ छंद ॥

नहिं लागु सासुर संक हे सखि, रंक जनु राजा भयो ।
निज नाह[6] मिलियो बाँह ग्रिव[7] दै, सकल कलमख दुरि गयो॥२२॥

॥ दोहा ॥

फागुन फरचो अमी फल, भरचो सकल दुख पात ।
निसु दिन रहत मगन मन, सो सुख कह्यो न जात ॥२३॥

॥ छंद ॥

कहि जात नहिं सुख ताहि मूरति, सुरति जहँ ठहराइया ।
सुनि बिमल बारह मास को, गुन दास धरनी गाइया ॥२४॥

॥ बोध लीला ॥

प्रथमहिं बरनों एकै करता । आदि अंत मधि भरता हरता ॥१॥
तब बंदों सतगुरु के पाँव । परस जो सोवत जीव जगावँ ॥२॥

---

(१) स्त्री । (२) चाहे । (३) सब । (४) मगन । (५) शङ्का, डर । (६) पति । (७) गर्दन में ।

तब पुनि सकल साधु सिर नावों । जा की दया अभय पद पावों ॥३
स्रवनन्ह सुनी संत की बानी । तब पुनि बेद पुरान कहानी ॥४
संसकार सतसंगति पाई । तब यह जग मिथ्या ठहराई ॥५
जित देखा इस्थित नहि कोई । सो इस्थित जा तें सब होई ॥६
संसा करि संसार भुलाना । सो सब हृदय कियो अनुमाना ॥७
जस सपने सुख संपति पावे । जागे काज कछू नहिं आवे ॥८
मरकट मुट्ठी छोड़ि न देई । बिनु बंधन तन बंधन लेई ॥९
नाभि सुगंध नासिका बासा । चरचत[1] फिरे चहूँ दिस घासा ॥१०
दूजा देखो दरपन माहीं । छबि जनु एक बहुरि कछु नाहीं ॥११
नलिनी बैठि सुगा जिमि भूला । भरमत अंध अधोमुख झूला ॥१२
जल मद्धे प्रतिमा देखलावे । खोजत बिनसे हाथ न आवे ॥१३
अपनी देंह घुमावत बारा[2] । घूमत कहे सकल संसारा ॥१४
जानत जेंवरि[3] सरप अँधारे । निरजिव होत सो दीपक बारे ॥१५
तृन को मानुष खेत मँझारा । मृग तेहि मद्ध चरे नहिं चारा ॥१६
फटिक सिला अरुझै मै मंता[4] । अपनी कुबुधि गँवायो दंता ॥१७
देखत खाल गऊ गरवानी । हेतु करे अपनो सुत जानी ॥१८
अस्थिर आपु नावरी माहीं । जानत अवर चले सब जाहीं ॥१९
भूँसत स्वान काँचु के ग्रेहा । मन अभिमान बिसारे देंहा ॥२०
मृग-तृस्ना जल धोखे धावे । थाकि परे पाछे पछितावे ॥२१
मानुष जन्म जुआ में हारे । हरि भक्ती नहिं हृदय बिचारे ॥२२
उदय अस्त जहाँ लगि देखा । सत्त आतमा राम बिसेखा ॥२३
एकै बीज बृच्छ होए आया । खोजत काहु अंत नहिं पाया ॥२४
देखो निरखि परखि सब कोई । सब फल माहिं बीज एक होई ॥२५
पुरइन ज्यों जल मध्य अकासा । एकै ब्रह्म सकल घट बासा ॥२६
मनि-गन माल मध्य जिमि डोरा । सागर एक अनेक हिलोरा ॥२७

---

(१) ढूंढ़ता । (२) बेर, समय । (३) रस्सी । (४) मदांध हाथी ।

एक भँवर सब फूल मँझारा । एक दीप सब घर उँजियारा ॥२८
तत्तु निरंजन सब के संगा । पसु पंछी नर कीट पतंगा ॥२९
देखो आपन कया बिलोई । बाद बिबाद करे मति कोई ॥३०
काम क्रोध मद लोभ नेवारे । समता गहि ममता को मारे ॥३१
आन के दोष कबहुँ नहिं धरई । जानत जीव के घात न करई ॥३२
निरपच्छी साँचहि अस्थावे[१] । निरदावा धन मृथा न खावे ॥३३
संतत धर्म अनासृत करई । सो प्रानी भवसागर तरई ॥३४
दुख सुख एकै भाव जनावे । अभिअंतर बिस्वास बढ़ावे ॥३५
अस्तुति निंदा दुवो समाना । सुरनर मुनि गन ताहि बखाना ॥३६
तेहि समान तुले नहिं कोई । जीवन-मुक्त कहावे सोई ॥३७
मन परमोध जाहि मन भावे । त्रिबिधि पाप तन ताप नसावे ॥३८
चित्रगुप्त धरमाधो राजा । काल दूत जम आरति साजा ॥३९
अपनो आपा आपु मिटाई । धरनीदास तासु बलि जाई ॥४०
ऐसी दसा बिराजी जा की । धरनो तहँ न रही कछु बाकी ॥४१

॥ साखी ॥

॥ गुरु ॥

धरनी जहँ लगि देखिये, तहँ लों सबै भिखारि ।
दाता केवल सतगुरू, देत न माने हारि ॥ १ ॥
धरनी यह मन मृग भयो, गुरू भये ज्यों ब्याध ।
बान सब्द हिये चुभि गयो, दरसन पाये साध ॥ २ ॥
धरनि फिरहिं देसंतरो, धरि धरि के बहु भेस ।
कोई कोई देखिहै, अंतर गुरु उपदेस ॥ ३ ॥
धूवाँ के धवरेहरा,[२] औ धूरी को धाम ।
ऐसे जीवन जगत में, बिनु गुरु बिनु हरि नाम ॥ ४ ॥
धरनो सब दिन सुदिन है, कबहुँ कुदिन है नाहिं ।
लाभ चहूँ दिसि चौगुनो, (जो) गुरु सुमिरन हिये माहिं ॥ ५ ॥

(१) ठहरावै, गहै । (२) ऊंचा घर ।

॥ चेतावनी ॥

धरनी धरि रहु हरि ब्रतहिं, परिहरि सबही मोह।
धन सुत बंधु बिभव[१] जत, होवे अंत बिछोह ॥ ६ ॥
धरनी धोख न लाइये, कबहीं अपनी ओर।
प्रभु सों प्रीति निबाहिये, जीवन है जग थोर ॥ ७ ॥
गोरिया गरब करहु जनि, अपने गोरे गात।
काल्हि परों चलि जाइ है, जैसे पियरे पात ॥ ८ ॥
धरनी चहुँ दिसि चर्चिया[२], करि करि बहुत पुकार।
नाहीं हम हैं काहु के, नाहीं कोउ हमार ॥ ९ ॥

॥ बिरह और प्रेम ॥

धरनी धन वो बिरहनी, धारै नाहीं धीर।
बिहवल बिकल सदा चित, दुर्बल दुखित सरीर ॥१०॥
धरनी परबत पर पिया, चढ़ते बहुत डेराँव।
कबहुँक पाँव जु डिगमिगे, पावों कतहुँ न ठाँव ॥११॥
धरनी धरकत है हिया, करकत आहि करेज।
ढरकत लोचन भरि भरी, पीया नाहिन सेज ॥१२॥
धरनी धवल[३] धरेहरहिं, चढ़ि चढ़ि चहुँ दिसि हेर।
आवत पिय नहिं दीखतो, भइली बहुत अबेर ॥१३॥
धरनी सो दिन धन्न है, मिलब जबै हम नाह[४]।
संग पौढ़ि सुख बिलसिहौं, सिर तर धरि के बाँह ॥१४॥
धरनी धन की भूल हो, कछू बरनि नहिं जाय।
सनमुख रहती रैन दिन, मिलत नहीं पिय धाय ॥१५॥
धरनी पलक परै नहीं, पिय की झलक सोहाय।
पुनि पुनि पीवत परम रस, तबहूँ प्यास न जाय ॥१६॥
धरनी धन तन जिवन यह, चाहे रहै कि जाय।
हरि के चरनहिं हृदय धरि, अब तौ हेत बढ़ाय ॥१७॥

---

(१) ऐश्वय। (२) ढूंढ़ा। (३) सफेद। (४) पति।

धरनी सो धन धन्य हो, धन धन कुल उँजियार।
जा कर बाँह धइल पिया, आपन हाथ पसार ॥१८॥
धरनी पिय जिन पावल, मेटि गइल सब दंद।
अरध उरध सुर गावल, हिरदय होय अनंद ॥१९॥
धरनी खेती भक्ति की, उपजे होत निहाल।
खर्चै खाय निबरै नहिं, परै न दुक्ख दुकाल ॥२०॥
धरनी मन मिलबो कहा, जो तनिक माहिं बिलगाय।
मन को मिलन सराहिये, जो एक में इक होइ जाय ॥२१॥

॥ तत्व बस्तु ॥

तेरे मन में तत्व है, तो अनते कित धाव।
धरनी गुरु उपदेस लै, घरहिं माँहिं घर छाव ॥२२॥
अर्ध कँवल के ऊपरे, तहाँ दुवादस एक।
धरनी भौजल बूड़ते, गुरु गम पकरी टेक ॥२३॥
दिया दिया घर भीतरे[1], बाती तेल न आगि।
धरनी मन बच कर्मना, ता सों रहना लागि ॥२४॥
बिनु पगु निरत करो तहाँ, बिनु कर दैदै तारि।
बिनु नैनन छबि देखना, बिनु सरवन झनकारि ॥२५॥
दैंह देवखरा भीतरे, मूरति जोति अनूप।
मोती अच्छत चढ़तु है, धरनी सहज सरूप ॥२६॥
धरनी अरध उरध चढ़ि, उदयो जोति सरूप।
देखु मनोहर मूरती, अतिहीं रूप अनूप ॥२७॥
बहुत दुवारे सेवना, बहुत भावना कीन्ह।
धरनी मन संसय मिटी, तत्व परो जब चीन्ह ॥२८॥
धरनी चहुँ दिसि दौरियो, जहँ लों मन की दौर।
एक आतमा तत्व बिनु, अनत न पाई ठौर ॥२९॥

(१) अंतर में दीपक धरा है।

तब लगि प्रगट पुकारिया, जब लगि निवरी नाहिं ।
धरनी जब निवरी परी, मन की मनहीं माहिं ॥३०॥
धरनी हृदय पलंगरी, प्रीतम पौढ़े आय ।
सभा सुनी जो स्रवन तें, कहे कवन पतियाय ॥३१॥
धरनी तन में तख्त है, ता ऊपर सुलतान ।
लेत मोजरा सबहिं को, जहँ लौं जीव जहान ॥३२॥
बिनु अच्छर के अच्छरा, बिन लिखनी का लेख ।
बिनु जिभ्या का बाँचना, धरनी लखा अलेख ॥३३॥
लिखि लिखि सिखि सिखि का भयो, पढ़ि गुनि गाय बजाय ।
धरनी मूरति मोहिनी, जौं लगि हिये न समाय ॥३४॥
अच्छर सब घट उच्चरै, जेते जिव संसार ।
लागि निरच्छर जो रहे, ता अच्छर टकसार ॥३५॥

॥ ध्यान ॥

धरनी ध्यान तहाँ धरो, उलटि पसारो दृष्टि ।
सहज सुभावहिं होत जहँ, पुहुप माल की बृष्टि ॥३६॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, जहवाँ खुलहि किवार ।
निरखि निरखि परखत रहो, पल पल बारम्बार ॥३७॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, प्रगट जोति फहराहि ।
मनि मानिक मोती झरै, चुगि चुगि हंस अघाहि ॥३८॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, त्रिकुटी कुटी मँझार ।
घर के बाहर अधर है, सनमुख सिरजनहार ॥३९॥
धरनी अधरे ध्यान धरु, निसिबासर लौ लाइ ।
कर्म कींच मगु बीच है, (सो) कंचन गच ह्वै जाइ ॥४०॥

॥ आरती ॥

धरनी प्रभु की आरती, करिये बारंबार ।
ऊठत बैठत सोवते, अह निसि साँझ सकार ॥४१॥

साँझ समय कर जोरि कै, उभै[1] घरी जस गाव।
धरनी दास सुचित्त[2] ह्वै, गुरु भक्तन सिरनाव ॥४२॥

॥ बिनती ॥

धरनी जन की बीनती, करु करुनामय कान।
दीजै दरसन आपनो, माँगों कछु नहिं आन ॥४३॥
धरनी बिलखि[3] बिनती करै, सुनिये प्रभू हमार।
सब अपराध छिमा करो, मैं हौं सरन तिहार ॥४४॥
धरनी सरनी रावरी, राम गरीब-नेवाज।
कवन करैगा दूसरो, मोहिं गरीब के काज ॥४५॥
काहू के बहु बिभव भइ, काहू बहु परिवार।
धरनी कहत हमहिं बल, ए हो राम तुम्हार ॥४६॥
बार बार संसार में, धरनी लागत चोट।
अब पकरो परतच्छ ह्वै, राम नाम की ओट ॥४७॥
तिनुका दाँत के अंतरे, कर जोरे भुइँ सीस।
धरनी जन बिनती करै, जानु[4] परो जगदीस ॥४८॥
धरनी नहिं बैराग बल, नाहिं जोग सन्यास ॥
मनसा बाचा कर्मना, बिस्वंभर बिस्वास ॥४९॥
बिनती लीजे मानि करि, जानि दास को दास।
धरनी सरनी राखिये, अवर न दूसर आस ॥५०॥

॥ ब्राह्मण ॥

धरनी भरमी बाम्हने, बसहिं भरम के देस।
करम चढ़ावहि आपु सिर, अवर जे ले उपदेस ॥५१॥
करनी पार उतारिहै, धरनी कियो पुकार।
साकित बाम्हन नहिं भला, भक्ता भला चमार ॥५२॥
मास अहारी बाम्हना, सो पापी बहि जाउ।
धरनी सूद्र बइस्नवा, ताहि चरन सिर नाउ ॥५३॥

---

(१) दो। (२) एक चित। (३) रोकर। (४) जाँघ, चरन।

॥ भेष ॥

कुल तजि भेष बनाइया, हिये न आयो साँच ।
धरनी प्रभु रीझै नहीं, देखत ऐसो नाच ॥५४॥
भेष लियो दाया नहीं, ध्यान धतूरा भाँग ।
धरनी प्रभु काँचा नहीं, जो भूलत ऐसे स्वाँग ॥५५॥

॥ नारी ॥

नारी बटमारी करै, चारि चौहटे माहिं ।
जो वोहि मारग होइ चले, धरनी निबहे नाहिं ॥५६॥
दामिनी ऐसी कामिनी, फाँसी ऐसो दाम ।
धरनी दुइ तें बाचिये, कृपा करै जो राम ॥५७॥
धरनी ब्याही छोड़िये, जो हरिजन देखि लजाय ।
बेस्या संग बिराजिये, जो भक्ति अंग ठहराय ॥५८॥

॥ मिश्रित ॥

धरनी काहि असीसिए, औ दीजे काहि सराप ।
दूजा कतहुँ न देखिये, सब घट आपै आप ॥५९॥
धरनी कथनी लोक की, ज्यों गीदर को ज्ञान ।
आगम भाखै और के, आपु परे मुख स्वान ॥६०॥
धरनी सो पंडित नहीं, जो पढ़ि गुन कथै बनाय ।
पंडित ताहि सराहिये, जो पढ़ा बिसरि सब जाय ॥६१॥
धरनी कागद फारिकै, कलम पबारै[1] दूर ।
कया कचहरी पैठिकै, बैठा रहै हजूर ॥६२॥
धरनी कोउ निंदा करै, तू अस्तुति करु ताहि ।
तुरत तमासा देखिये, इहै साधु मत आहि ॥६३॥
धरनी जिव जनि मारियो, माँसहिं नाहीं खाहु ।
नंगे पाँव बबूर बन, होइ नाहिं निरबाहु ॥६४॥

---

(१) डाले ।

माँस अहारी जीयरा, सो पुनि कथै गियान।
नाँगी होय घूँघट करै, धरनी देखि लजान ॥६५॥
धरनी यह मन जम्बुका[1], बहुत कुभोजन खात।
साधु संग मृग होइ रहु, सब्द सुगंध बसात ॥६६॥
धरनी बाहर धुंधरो, भीतर ऊगो चंद।
भयो भले को अति भलो, है मंदे को मंद ॥६७॥
बिष लागे दुनिया मरै, अमृत लागे साध।
धरनी ऐसो जानिहै, जाको मता अगाध ॥६८॥

॥ शब्द ॥

धरनी सब्द प्रतीत बिनु, कैसहु कारज नाहिं।
सब्द सिढ़ी बिनु को चढ़ै, गगन झरोखा माहिं ॥६९॥
सब्द सब्द सब कोइ करै, धरनी कियो बिचार।
जो लागे निज सब्द को, ता को मता अपार ॥७०॥
सब्द सकल घट ऊचरे, धरनी बहुत प्रकार।
जो जाने निज सब्द को, तासु सब्द टकसार ॥७१॥
धरनो धरम अरु करम कै, कलि में कछू न काम।
मनसा बाचा करमना, भजिये केवल नाम ॥७२॥
परमारथ को पंथ चहि, करते करम किसान।
ज्यों घर में घोड़ा अछत, गदहा करै पलान ॥७३॥
धरनी आपन मरम हो, कहिये नाहीं काहि।
जाननहार सो जानिहै, जैसो जो कछु आहि ॥७४॥

॥ इति ॥

---

(१) स्यार।